ज्ञान का सागर

पंथ रत्न ज्ञानी संत सिंघ जी मसकीन के

मुख्य लेख



 १ ओअंकार सतिगुरु प्रसादि ।। 

ज्ञान का सागर

ज्ञानी संत सिंघ मसकीन के
मुख्य लेखों की पुस्तक

संग्रहकर्ता :
मनजिंदर सिंघ



प्रकाशक :
भा. चतर सिंघ जीवन सिंघ
अमृतसर

GYAN KA SAGAR

Edited by: Manjinder Singh

ISBN : 978-81-7601-966-8

प्रथम संस्करण : 2009

भेटा : 100-00



प्रकाशक :

भा. चतर सिंघ जीवन सिंघ

बाज़ार माई सेवा, अमृतसर (पंजाब)

फोन : 91-(183)-2542346, 2547974, 2557973

फैक्स : 91-(183)-5017488

E-mail : csjsexports@vsnl.com, csjssales@hotmail.com,

website : www.csjs.com

मुद्रक :

जीवन प्रिंटर्ज़, अमृतसर। फोन : (0183) 2705003, 5095774

सम्पादकीय

संसारिक लालचों से ऊपर उठ कर सत्य, धर्म और सच्चाई पर दृढ़ता से पहरा देने वाले मसकीन जी चाहे शरीर कारण हमारे बीच नहीं हैं पर उनके द्वारा बोले विचार, उनकी शिक्षाएँ, उनकी रचनाएँ और गुरुबाणी की व्याख्या करने वाली कैसेटस/सी.डी. हमारे पास मौजूद होने से मसकीन जी सदैव हमारे साथ हैं। किसी भी विषय को छू कर श्रोताओं के अंदर तक पहुँचा कर उनके द्वारा बोले गये और व्याख्या किये गये शब्द-ज्ञान को भी अंदर तक पहुँचा कर और सूझ देकर श्रोता को बाँधने का गुण केवल और केवल स्वर्गीय ज्ञानी संत सिंघ जी मसकीन के पास ही था। मसकीन जी पंजाबी, उर्दू, फ़ारसी के विद्वान ही नहीं थे, बल्कि सिख जीवन को वास्तविक रूप में जीने वाले व्यक्ति भी थे। अपने जीवन के दौरान मसकीन जी, साहिब श्री गुरु रामदास जी के प्रकाश पर्व से लेकर बंदी छोड़ दिवस तक दीवान हाल मंजी साहिब, श्री अमृतसर में ही सिख संगतों को कथा श्रवण नहीं कराते रहे, बल्कि कैनेडा, अमरीका, इंग्लैंड, दुबई, थाईलैंड, मलेशिया और दुनिया के कोने-कोने में सिख संगतों को गुरुबाणी की कथा श्रवण करवाते रहे हैं। श्री गुरु ग्रंथ साहिब जी के आये हुक्मनामों की उनकी तरफ से गुरमति समारोह में की गई व्याख्या को पुस्तक रूप देने का छोटा-सा यत्न अगर सिख संगत परवान करे तो अपने आप को भाग्यशाली समझूँगा।

प्रस्तुत पुस्तक 'ज्ञान का सागर' में उनके द्वारा बोले कुछ प्रमुख लैक्चरों की कैसेटों का विचार है, जो मैंने हू-ब-हू लिखने की कोशिश की है, इसमें उनके नौ लैक्चर-ज्ञान का सागर, जिनि पूरन पैज

रखाई, जपु मन सति नामु सदा सति नामु, सतिगुरु मिलै त सोझी होइ, पारब्रहम परमेसर सतिगुरु, मनहु न नामु विसारि, अति ऊचा ता का दरबारा संत भले हरि राम, निरमल भए सरीर जन धूरी नाइआ दर्ज हैं ताकि प्रेमीजन इनको पढ़ कर अपना जीवन सफल कर सकें।

मनजिंदर सिंघ
संपादक

बी. 1/254, मकसूदां
जालंधर

विषय-सूची

ज्ञान का सागर

सम्मानयोग्य, गुरु रूप साधसंगत जी,

सदा फतह प्रवान करो !

वाहिगुरु जी का खालसा ।। वाहिगुरु जी की फतह ।।

श्री गुरु गोबिन्द सिंघ जी महाराज का एक छंद, उसकी विचार आप जी को कुछ समय श्रवण करा रहा हूँ :

सेवा करो करुणानिधि की जह सेव चार पदारथ पई ऐ ।।
नाम लए जम त्रास मिटे कली काल नसे हर सरण सीधे ऐ ।।
लोक परलोक सभी सुधरे हरि भगत प्रापत होये निधई ऐ ।।
दास गोबिंद फतहि सतिगुरु की अस प्रभ छोड अवर कत जई ऐ ।।

महाराज कहते हैं कि ऐसे प्रभु को छोड़ कर हे मनुष्य ! और कहाँ जा रहा है, जो प्रभु दया का भंडार है, जिसकी दया कभी खत्म नहीं होती। आम मनुष्य किसी समय दयालु होता है, किसी समय कठोर होता है। किसी समय उसकी देने की सोच होती है, किसी समय छीनने की सोच होती है। मनुष्य का पूरा जीवन दो रंगों में व्यतीत होता है, कभी दया में, कभी कठोरता में। मनुष्य की दया एक तालाब से ज्यादा नहीं है। महाराज कहते हैं, प्रभु की दया तो सागर है, खत्म नहीं होती।

गुरमति राज-योग का मार्ग है, राज-भाग खड़ा है दो पदार्थों पर योग भी खड़ा है दो पदार्थों पर। वह दो पदार्थ हों, राज चलता है और दो पदार्थों से ही योग चलता है। राज संसार के पूरे सुख, योग परमात्मा का आनन्द, नाम का आनन्द। ऐसा देखने में आया है कि कोई मनुष्य बाहर से मालामाल है पर अंदर से वह कंगाल है। कारण? दो पदार्थ बाहर के इसके पास हैं, अंदर के कोई नहीं।

ऐसा भी देखने में आया है कि दो पदार्थ अंदर के तो हैं, पर बाहर से बिल्कुल कंगाल है। बाहर की पूर्ति के लिए उनको भिक्षा मांगनी पड़ी। पूरी दुनिया में उस तरह के योगी मौजूद हैं, दो पदार्थ थे, दो नहीं थे। बाहर के दो पदार्थ न हों तो भिक्षा मांग कर निर्वाह करना पड़ेगा। अंदर के दो पदार्थ नहीं हैं तो जीवन भर मानसिक पीड़ा में रहेगा क्लेश में रहेगा। यह मालामाल होकर भी कंगाल ही रहेगा। यह ठीक है, ऐसा विद्वान कहते हैं कि जो अंदर से मालामाल है, अगर बाहर से कंगाल भी है, ज़िन्दगी चल जाती है। गुरु अर्जुन देव जी महाराज यूं कहते हैं :

सगल स्रिसटि को राजा दुखीआ ।। *(अंग २६४)*

सिकन्दर ने ख्वाब लिया था। उसका ख्वाब ख्वाब ही रह गया। पर उसकी ज़िन्दगी बताती है कि जीवन भर मानसिक तनाव में रहा। मैं अर्ज़ करूँ, गुरमति राज–योग का मार्ग है। तू बाहर से भी मालामाल है, अंदर से भी मालामाल है। बाहर से मालामाल हो सके, इसके लिए हाथ–पाँव चलाने पड़ेंगे, बुद्धि का उपयोग करना पड़ेगा। इस पूरी क्रिया को कहते हैं कर्म करना। तब जाकर राज भाग चलेगा। अंदर की योग साधना कर्म पर नहीं खड़ी। किस पर खड़ी है :

करम करत होवै निहकरम ।। *(अंग २७४)*

निष्कर्म पर खड़ी है। अकर्म पर खड़ी है। आपके ज्ञान के लिए अर्ज़ करूँ, परमात्मा को मजबूरी में हम कर्ता कहते हैं, बना रहा है। पर जो गहरे विद्वान हैं और अनुभवी हैं वे कहते हैं, बना नहीं रहा, उससे हो रहा है। जैसे मैं साँस ले रहा हूँ, पर मैं ले नहीं रहा, चल रही हैं। जैसे मेरा दिल धड़क रहा है, मैं नहीं धड़का रहा। उस से सब कुछ हो रहा है, विद्वान ऐसा भी कहते हैं कि यदि उसको करना पड़ता तो अब तक उसने थक जाना था। वह जहाँ आप अकर्म है, वह किसी का कर्म नहीं है, किसी का किया हुआ नहीं है। विद्वान फिर एक कदम और आगे जाते हैं, उससे भी कुछ किया नहीं हुआ। अगर वह किसी का किया हुआ नहीं है तो उससे भी कुछ करना नहीं हुआ। फिर इतना पूरा संसार हो

रहा है। कुछ विद्वान विशेषतः व्यास सरीखे तो कहते हैं, पूरा ब्रह्माण्ड प्रभु की धड़कन है और कुछ भी नहीं। पूरा ब्रह्माण्ड उसकी चलती हुई साँस है और कुछ भी नहीं है। सारी की सारी लीला उसका चलता हुआ रक्त है। उसकी लीला कभी रुकती नहीं क्योंकि वह अजन्मा है।

राज भाग जिन दो पदार्थों पर खड़ा है उसको कहते हैं अर्थ और काम। योग जिन दो पदार्थों पर खड़ा है उसको कहते हैं धर्म और मोक्ष। इसको गुरु अर्जुन देव जी महाराज विस्तारपूर्वक बयान करते हैं :

अरथ धरम काम मोख का दाता ॥
पूरी भई सिमरि सिमरि बिधाता ॥ *(अंग ८०५)*

वह जो विधान बनाने वाला है, क्योंकि ठीक है समूह ब्रह्माण्ड चल रहा है पर किसी विधि-विधान के अनुसार। ऐसा नहीं कि गैर-वैधानिक कुछ हो रहा है। हमारे शरीर में ही बहुत भारी विधान है। अगर विधान नहीं है तो यह दाँत सिर पर लग सकते थे, उँगलियां पीठ पर लग सकती थीं, नाक सिर पर लग सकती थी। सब कुछ विधि विधान के अनुसार है। कौन-कौन-सी नस कहाँ होनी चाहिए, कौन-कौन-सा अंग कहाँ होना चाहिए, सब कुछ विधि विधान के अनुसार है। जैसे ईंटों को विधि विधान के अनुसार रखें तो महल बनता है। गैर-वैधानिक ढंग से गिरा दें तो दीवार नहीं बनती, महल कहाँ बनना है।

जिंदगी क्या है तरकीब का जहूर। *(उस्ताद ज़ोक)*

पूरे तत्वों का विधि-विधान के बीच आ जाना, यह ज़िन्दगी है।

मौत क्या है उन ही अजज़ा का परेशान होना।

इन तत्वों का बिखर जाना। बिखेरने के लिए विधि-विधान की ज़रूरत नहीं। किसी चीज़ को तोड़ना है, सीखने की ज़रूरत नहीं। बनाना है, सीखने की ज़रूरत है।

गंढेदिआं छिअ माह तुड़ंदिआ हिकु खिनो ॥ *(अंग ४८८)*

बाबा फ़रीद कहते हैं कि जो चीज़ मैंने छः महीनों में बनाई है, क्या इसको मिटाने के लिए भी छः महीने लगेंगे? इसलिए कहते हैं कि बर्बादी बड़ी आसान है, मिटाना बड़ा आसान है। एक पौधा मैंने लगाया है ज़मीन पर। पाँच साल के बाद वह फलीभूत हुआ है, फल देने लगा है। क्या इस वृक्ष को काटने में सात साल लगेंगे? नहीं, एक मिनट की बात है। संसार में कुछ भी बनाना हो, तरतीब की ज़रूरत है, विधि-विधान की ज़रूरत है, मेहनत की ज़रूरत है। कुछ भी मिटाना है तो कोई भी मिटा सकता है।

बैरूनी सम्पन्न जीवन को कहते हैं राज, अंदरूनी सम्पन्न जीवन को कहते हैं योग। देखने में आया है कि संसार में बहुत राजा हुए हैं, योगी नहीं थे। दुनिया में बेशतर योगी रहे हैं, राजा नहीं थे। गुरमति राज योग का मार्ग है। मेरा सिख राजा हो, मेरा सिख योगी हो। कर्म कर, उद्यम कर, मेहनत कर तू राजा बने। कर्म कर, अपने मन को अकर्म कर ताकि तू योगी बने।

अर्थ कहते हैं धन को और काम कहते हैं कामनाओं को। संसार में मेरी कोई भी कामना है, मैं कोई भी चीज़ लेना चाहता हूँ, धन के बिना नहीं मिलेगी। इसलिए जो अकेले योगी हैं उनकी साधना का यह भी एक अंग है कि कामनाएँ कम करो, क्योंकि कामनाएँ धन के बिना पूरी नहीं होंगी। एक सुन्दर मकान चाहिए तो धन के बिना नहीं बनेगा। सुन्दर कपड़े चाहिएँ, सुन्दर माहौल चाहिए, धन के बिना नहीं मिलेगा। कामना कम करो, ज़रूरतें कम करो। इस पर गुरुबाणी ने ज़ोर नहीं दिया। कारण ? यह जो तन है इसकी कोई भी ज़रूरत अंदर से पूरी नहीं होनी, बाहर से ही होनी है। मन को जो कुछ चाहिए, बाहर से कदापि धरती पर पूरा नहीं होगा।

इस घर महि है सु तू ढूंढि खाहि ।।
अउर किस ही के तू मति ही जाहि ।। *(अंग ११९६)*

सभ किछु घर महि बाहरि नाही ।।
बाहरि टोलै सो भरमि भुलाही ।। *(अंग १०२)*

मन की दौलत जो बाहर ढूँढता है, भ्रम भुलावे में है। तन की दौलत जो अंदर ढूँढता है, अज्ञानता के बीच है।

चारि पदारथ जे को मागै ।। साध जना की सेवा लागै ।।

(अंग २६६)

गुरु गोबिन्द सिंघ जी फुरमान करते हैं कि वह जो दया का सागर है, उसकी सेवा करो। अब परमात्मा की सेवा क्या है ? जो है निराकार उसको पानी पिलाएँगे, जिसने सात समुद्र बनाए हैं उसको भोजन खिलाएँगे। जो निराहार है और निराकार है। फिर उसकी सेवा क्या करें ? बड़ी सुन्दर पंक्ति है श्री गुरु ग्रंथ साहिब जी महाराज की :

हरि की टहल कमावणी जपीऐ प्रभ का नामु ।।

(अंग ३००)

बस यही है। इसलिए कहते हैं हरि की सेवा बहुत कठिन है। सब कुछ करना आसान है, बस जपना ही मुश्किल है। उसका नाम जपना, उसकी सेवा है। वह करुणा का सागर है, इतना दयालु है कि मनुष्य के हर उद्यम को, कर्म को वह सफल कर देता है। कहते हैं कि हर कर्म की सफलता का साधन परमात्मा स्वयं है। अगर वह साधन न बने तो कर्म सफल नहीं होता, आत्मिक आनन्द की प्राप्ति नहीं होती। एक विद्वान इसको इस तरह बयान करता है :

दुनिया में कुछ ऐसे भी कमल होते हैं।
खिलते नहीं पर वक्त उज्जल होते हैं।
खिले नहीं, कली बनकर रह गये।

अगर सूर्य की किरणें न मिलें तो नहीं खिलेंगे। पूर्ण तौर पर हवा के झोंके न मिलें तो नहीं खिलेंगे। सरोवर का पानी सूख गया तो नहीं खिलेंगे। एक कमल को खिलने के लिए जितने साधन चाहिए, वह तो होने चाहिए तो ही खिल सकेगा।

मनुष्य को राजा होने के लिए कुछ साधन चाहिए तो ही राजा बन सकेगा। मनुष्य को योगी होने के लिए कुछ साधन चाहिए तो ही योगी हो सकेगा।

यह बात जुदा है कि वो तामीर न हो।
और जहन में कुछ ताज़े महल होते हैं।

ऐसा कोई दिमाग नहीं जिसके अंदर कोई न कोई महल न हो। शाहजहान को साधन मिल गया, उसने ताज महल ज़मीन पर बना दिया। किसी को तो साधन प्राप्त नहीं होते, ताज महल दिमाग में रह जाते हैं। कामनाओं की पूर्ति हो सके, साधन चाहिए। साधन कौन है? कलगीधर पातशाह कहते हैं कि साधन परमात्मा है। तन के रोग मिट जाते हैं, मन का शोक मिट जाता है।

रोग सोग दुख जरा मरा हरि जनहि नही निकटानी ॥

(अंग ७११)

जहाँ धन में बरकत आ जाती है, वह साधन बन जाता है। अगर वह निमित्त न बने तो कोई धनवान नहीं बन सकता, कोई गुणवान नहीं बन सकता। वह निमित्त न बने तो मनुष्य अंदर से योगी नहीं बन सकता। महाराज कहते हैं कि लोक संवरता है राज से, परलोक संवरता है योग से। महाराज कहते हैं कि मेरी विनती है कि इस तरह के प्रभु को छोड़ कर और कहाँ जा रहे हो, जो लोक संवार देता है, राजा बना देता है और जो परलोक संवार देता है, योगी बना देता है।

श्री गुरु अर्जुन देव जी कहते हैं :

कालु जालु जमु जोहि न साकै सच का पंथा थाटिओ ॥

(अंग ७१४)

एक अकाल एक काल : काल को कहा है स्वतंत्रता, अकाल को कहा है मुक्ति। वैसे अकाल का मतलब है समय रहित। काल का मतलब है जो समय में है। काल संस्कृत का शब्द है, इसका अर्थ है समय। अकाल समय में नहीं है। यह तन काल के अंदर है, समय के बीच है। समय में जन्मा है, समय में जीयेगा, समय इसको खत्म कर देगा।

जो रस है बेरस हो जाता है। जो जीवन है वह मरण हो जाता है। जो सुन्दर है वह कुरुप हो जाता है। काल के दो रूप हैं—जो हँस रहा है, वह रोने लग पड़ता है। इसलिए कहते हैं समय के दो रंग हैं। काल के दो रंग हैं। यह दो रंग हम अपनी ज़िन्दगी में

देख सकते हैं। जीवन है : यही जीवन एक दिन मरण में बदलता है। खुशी है, खुशी गम में बदलती है। सुख दुख में बदल जाता है। अकाल रस तो है, बेरस नहीं है। जीवन तो है, मरण नहीं है। अकाल आनन्द तो है, दुख नहीं है। अकाल महान् खुशी तो है, गम नहीं है। जैसे एक सिक्के के दो पहलू होते हैं, काल के यह दो रूप हैं। इस ज़मीन में बड़े-बड़े आसमान दफन पड़े हैं। आसमान की तरह जिनकी बुलन्दी है, आसमान की तरह जिनकी शोहरत, आसमान की तरह जो फैले हुए थे, आज ज़मीन में कब्र की तरह हैं। कल तक आसमान में सूर्य की मानिंद थे, आज ज़मीन में कब्र की मानिंद हैं। कल तक आसमान में चंद्रमा की मानिंद थे, आज ज़मीन में मिट्टी की मानिंद हैं।

मिटे ज़िन्दगी के निशां कैसे कैसे।
ज़मीन खा गई आसमां कैसे कैसे।

यह ज़मीन बड़े-बड़े आसमानों को निगल गई है। इस तन को मनुष्य काल से नहीं बचा सकता, समय से नहीं बचा सकता, क्यों? समय में बना है। जब बना समय में है तो समय इसको मिटा देगा। इस तन के अंदर मन है जो समय में नहीं बना। जो अकाल से सीधा आया है।

मन तूं जोति सरूपु है अपणा मूलु पछाणु ॥

(अंग ४४१)

तन काल से आया है, काल खा जायेगा। मन अकाल से आया है, तन की संगत करके काल में भटकता है। धर्म की साधना, कथा और कीर्तन, धार्मिक उपदेश और संदेश इस तरह ही है कि तन को काल खा जाए इससे पहले मन को अकाल में लीन कर लें। तन को काल खत्म कर दे, यह तन चाहे गुरु, पीर, पैगम्बर, अवतारों और देवताओं का क्यों न हो, काल खा जाता है। कलगीधर पातशाह फुरमाते हैं :

काल पाइ ब्रहमा बपु धरा ॥
काल पाइ सिव जू अवतरा ॥

काल पाइ कर बिसनु प्रकासा ।।
सकल काल का कीआ तमासा ।। *(चौपई साहिब)*

यह काल का तमाशा है। समय में ब्रह्मा बना, चार वेद उसने रचे। बड़ी प्रतिष्ठा, देवताओं का सिरमौर, संसार को बहुत बड़ा ज्ञान देने वाला काल में बना पर काल ने ब्रह्मा के तन को मिटाया, मन नहीं। मन को तो कह सकते हैं इतना बड़ा ज्ञानी उसका मन परमात्मा में लीन हो गया। उसका मन अकाल में लीन हो गया। तन को काल खाये इससे पहले मन अकाल में जुड़ जाए, इसको बाणी कहती है जीवन्मुक्त। यह जीते जी मुक्त हो गये।

कहत कबीरा जो हरि धिआवै जीवत बंधन तोरे ।।
(अंग ४८०)

उसने जीते जी कर्मों के बन्धन तोड़ दिये। उसने जीते जी दुःख-सुख के बन्धन, पाप-पुण्य के बन्धन तोड़ दिये। स्वतंत्र हो गया, मोक्ष गति को प्राप्त हो गया। परमात्मा जैसे मुक्त है, उस मुक्ति में लीन हो गया। इसको गुरबाणी यूँ कहती है :

सूरज किरणि मिले जल का जलु हूआ राम ।।
जोती जोति रली संपूरनु थीआ राम ।। *(अंग ८४६)*

तन खाक के बीच खाक हो उससे पहले मन नूर के बीच नूर हो जाए, कहते हैं संपूर्ण हो गया है। तन मिट्टी में मिट्टी हो, उससे पहले मन ज्योति के बीच ज्योति स्वरूप हो जाए, उसको कहते हैं यात्रा सफल हो गई :

सफल सफल भई सफल जात्रा ।।
आवण जाण रहे मिले साधा ।। *(अंग ६८७)*

जीवन को यात्रा कहा है। यात्रा में क्या होता है? एक पड़ाव आया, एक गया। एक वस्तु मिली, एक गई। कोई मिला, कोई बिछुड़ गया। सुख मिला है, दुख में बदल गया है। खुशी मिली है, गम में बदल गई है। जवानी मिली है, बुढ़ापे में बदल गई है। जन्म मिला है, मरण में बदल गया है। इसको कहते हैं यात्रा में एक

पड़ाव आया, एक गया। मन अगर अकाल में लीन हो जाये तो गुरबाणी कहती है:

मिलिआ होइ न विछुड़ै..... ।। (अंग ५६)

संसार में काल में जो भी मिला है, बिछड़ेगा। अगर मन परमात्मा में लीन हो गया, परमात्मा मिल गया तो अब गुरुबाणी कहती है अब बिछोड़ा नहीं है। अक्सर ऐसा होता है, तन को काल खा जाता है, काल ने बनाया है। मन अकाल में लीन नहीं होता, यात्रा अधूरी रह जाती है। यात्रा अधूरी किसको कहोगे? मुसाफिर रास्ते में है अभी घर नहीं पहुँचा। तन का घर श्मशान घाट है, मन का घर भगवान का घाट है। गुरुबाणी आवाज़ देती है :

मेरे मन परदेसी वे पिआरे आउ घरे ।।

तू प्रदेश में है। जो कुछ तुझे मिला है, रास्ते के पड़ाव हैं। परिवार मिला है, धन संपदा मिली है, मान-मर्यादा मिली है, प्रभुता मिली है, कुछ भी मिला है, सब रास्ते के पड़ाव हैं। परमात्मा मिला है। अब तू अपने घर आ गया है, तुझे घर मिल गया है। गुरुबाणी आवाज़ देती है। यह संसार तमाशा है, बनाना और फिर मिटा देना।

दरिया के किनारे मासूम बच्चे रेत के महल बनाते हैं, फिर खुशी-खुशी आप मिटा देते हैं। बड़े सुंदर-सुंदर खिलौनों से बच्चा खेलता है, फिर अपने आप तोड़ देता है। उसको बनाने में भी खुशी है, मिटाने पर भी खुशी है। संसार को बनाता है वह परमात्मा आनन्द में, मिटा देता है आनन्द में :

आवन जानु इकु खेलु बनाइआ ।।
आगिआकारी कीनी माइआ ।। (अंग २९४)

बहुत बड़ा है तो उसका खेल भी बड़ा है। इसलिए हमें कहा गया है अकाल को परमात्मा मानो। अकाल को ही गुरु मानो। तन को गुरु न मानो, क्योंकि तन को तो काल खा जाता है। फिर तो मानना पड़ेगा कि परमात्मा मर गया है। गुरु तो मन है, ज्ञान है :

गिआन गुरू आतम उपदेसहु नाम बिभूत लगाओ ।।
(दसम ग्रंथ)

कलगीधर पातशाह कहते हैं कि काल इतना बलवान है कि काल ने जो कुछ भी बनाया है, मिटा देता है। उसने आज तक जो कुछ बनाया है, कुछ जल में है, कुछ ज़मीन में है, कुछ आसमान में उड़ने वाले जीव-जन्तु हैं।

जीवन यह तीन तरह का मानते हैं—सागर का जीवन, धरती का जीवन, आकाश का जीवन। सतगुरु कहते हैं :

जल कहा थल कहा गगन के गउन कहा ।।
काल के बनाइ सभै काल ही चबाहेंगे ।। ८ ।। ८८ ।।

(दसम ग्रंथ)

जो समय में बने हैं, समय सब को मिटा देगा। यह प्राकृतिक नियम है। यह प्रकृति का नियम नहीं है कि मन परमात्मा से बना है और परमात्मा में लीन हो जाए। इसके लिए साधना करनी पड़ेगी, जप तप करना पड़ेगा और महापुरुषों के वचनों की कमाई करनी पड़ेगी ताकि मन ज्योति में ज्योति हो जाए। फिर बाणी मोहर लगाती है। यह यात्रा संपूर्ण हो गई। सतगुरु रहमत करें। भूल चूक की माफी।

वाहिगुरु जी का खालसा ।।
वाहिगुरु जी की फतह ।।

जिनि पूरन पैज रखाई

सोरठि महला ५ ॥
प्रभ की सरणि सगल भै लाथे दुख बिनसे सुखु पाइआ ॥
दइआलु होआ पारब्रहमु सुआमी पूरा सतिगुरु धिआइआ ॥ १ ॥
प्रभ जीउ तू मेरो साहिबु दाता ॥
करि किरपा प्रभ दीन दइआला
गुण गावउ रंगि राता ॥ रहाउ ॥
सतिगुरि नामु निधानु द्रिड़ाइआ चिंता सगल बिनासी ॥
करि किरपा अपुनो करि लीना मनि वसिआ अबिनासी ॥ २ ॥
ता कउ बिघनु न कोऊ लागै जो सतिगुरि अपुनै राखे ॥
चरन कमल बसे रिद अंतरि अंम्रित हरि रसु चाखे ॥ ३ ॥
करि सेवा सेवक प्रभ अपुने जिनि मन की इछ पुजाई ॥
नानक दास ता कै बलिहारै
जिनि पूरन पैज रखाई ॥ ४ ॥ १४ ॥ २५ ॥ *(अंग ६१५-१६)*

वाहिगुरु जी का खालसा ॥ वाहिगुरु जी की फतह ॥

आदरणीय गुरु रूप साध संगत जी !

श्री गुरु अर्जुन देव जी महाराज ने जो पावन पवित्र हुक्मनामा आज बख्शिश किया है, इसमें मनुष्य की मूल समस्याओं और निवृत्ति के साधन बताये हैं। मूल समस्याएँ हैं भय और दुख। यह भय किस तरह मिटे ? जन्म से लेकर मृत्यु तक मनुष्य भय में जीता है। एक बच्चा भी भयभीत है, फिर जवान के अपने भय हैं। बूढ़ों के अपने भय हैं। पल-पल के साथ मनुष्य के भय बढ़ते हैं, कहते हैं अगर रोज़-रोज़ कुछ बढ़ता है जीवन के बीच तो भय बढ़ता है, दुख

बढ़ता है। उम्र बढ़ने के साथ जिन्दगी घट रही है, जिन्दगी के कम होने से भय बढ़ता है। एक बच्चा इतना दुखी नहीं, जितना जवान है और एक जवान इतना दुखी नहीं, जितना बूढ़ा है। एक बच्चा इतना भयभीत नहीं, जितना जवान है और एक जवान इतना भयभीत नहीं, जितना बूढ़ा है। इस भय को समझना है तो दुख को समझना है, समस्या यही है।

अवतार पुरुष जगत में आये हैं ताकि इन समस्याओं का समाधान हो सके। मनुष्य जीता है भय में, मनुष्य जीता है दुख में। यह नहीं कि मनुष्य किसी समय दुख में जीता है, किसी समय सुख में जीता है। हर समय दुख में जीता है। ऐसा भी नहीं कि मनुष्य किसी समय भय में जीता है, किसी समय निर्भय होकर जीता है। नहीं, हर समय भयभीत है। यह एक बहुत बड़ी सच्चाई है और इस सच्चाई का पता चल जाए तो कहते हैं कि धर्म के मार्ग पर इसने पहला कदम रख लिया है। इसको समझ आ गई है। भय में जी रहा है, मनुष्य सब कुछ देखता है। भय को देखने में असमर्थ है। दुख में जी रहा है, दुख को देखने में असमर्थ है। प्रथम सच्चाई क्या है ? दुख है, भय है। अगर दुख है, भय है तो फिर इसका कारण भी है। विद्वान कहते हैं कारण है, है तो फिर निवृत्ति का साधन भी है। अगर निवृत्ति का साधन है तो फिर ऐसी दुनिया भी है जिसको कह सकते हैं निर्भय, परम सुख।

भय किस चीज़ का है ? जो कुछ मेरे पास है, चला न जाए। जीवन पास है, चला न जाए। जवानी पास है, चली न जाए। इज्जत मिली है, चली न जाए। प्रभुता मिली है, चली न जाए। धन मिला है, चला न जाए। इसका भय है। लोभ इस बात का है, यह सब कुछ आता रहे, भय इस बात का है, कहीं चला न जाए।

नैनह देखत इहु जगु जाई ॥ *(अंग ३२५)*

देखता है कि जा रहा है। मनुष्य अपनी जिन्दगी में देखता है कि बचपन तो गया, जवानी तो गई। पर मैं अर्ज़ करूँ, जवानी चली गई, बोध किसी-किसी को है। जिसको बोध है, कहते हैं कि इसको

धर्म का बोध है। धार्मिक ज्ञान मेरे लिए शिक्षा नहीं है। शिक्षा विज्ञान की हो सकती है और एक अनपढ़ आदमी वैज्ञानिक नहीं हो सकता क्योंकि सीखने के लिए पढ़ाई लिखाई चाहिए। विज्ञान क्या है ? संसार को जानना, पदार्थ को जानना। मैं हवा के बारे में जानता हूँ, मैं पानी के बारे में जानता हूँ, मैं धरती के बारे में जानता हूँ, मैं सूर्य, चाँद और तारों के बारे में जानता हूँ। कोई डाक्टर कह सकता है कि मैं शरीर के बारे में जानता हूँ।

मैं अर्ज़ करूँ, अगर विज्ञान शिक्षा पर खड़ा है और धर्म भी शिक्षा पर खड़ा हो तो फिर अनपढ़ आदमी के लिए कोई जगह नहीं। अनपढ़ आदमी न वैज्ञानिक बन सकेगा, न संत। अक्षरों का जिसको बोध नहीं, वैज्ञानिक तो नहीं बन सकता, पर संत बन सकता है। साईंस खड़ी है पदार्थ को जानने में, धर्म खड़ा है अपने आप को बदलने में।

जो प्राणी गोविंदु धिआवै ॥
पड़िआ अणपड़िआ परम गति पावै ॥ *(अंग १९७)*

श्री गुरु नानक देव जी महाराज का एक बड़ा कीमती वाक्य है :

पड़िआ होवै गुनहगारु ता ओमी साध न मारीऐ ॥

(आसा दी वार)

बहुत अनपढ़ मनुष्य बड़े गुनाह नहीं कर सकता। बड़े भयानक गुनाह पढ़े-लिखे मनुष्य करेंगे। इस तरह न समझ लेना कि मैं पढ़ाई लिखाई की निंदा कर रहा हूँ। संसार को समझने के लिए पढ़ाई-लिखाई चाहिए, पर निरंकार को प्राप्त करने के लिए अपने आप को बदलना पड़ेगा। इसको धार्मिक ज्ञानी ऐसे भी कहते हैं कि अयोग्य मनुष्य भी संसार में बहुत कुछ प्राप्त कर सकते हैं। छोटे मनुष्य के पास बहुत बड़ी प्रभुता हो सकती है। शूम आदमियों के पास भी बहुत धन हो सकता है। जालिम मनुष्यों के पास भी बहुत बड़े-बड़े सिंहासन हो सकते हैं। पर परमात्मा तो उस दिन मिलता है, जिस दिन मनुष्य परमात्मा जैसा हो, उससे पहले नहीं। अयोग्य मनुष्य को नहीं मिलता। जो ड्राईवर बार-बार दुर्घटना करे और गाड़ी का

सत्यानाश कर दे तो क्या उसको अच्छा ड्राईवर कहोगे ? जीवन मूर्ख मनुष्य नहीं चला सकता। जिन्दगी को चलाने के लिए सूझ-बूझ चाहिए। धन तो बहुत ज्यादा है इंसान के पास, पर इन्सान छोटा है।

सिंहासन तो बहुत बड़ा है इन्सान के पास, पर इन्सान छोटा है। कहते हैं औरंगज़ेब ने जिसका नाम था मोईन-दीन और इसने अपना तखल्लस रखा औरंगज़ेब भाव तख्त की शोभा। श्री गुरु गोबिन्द सिंघ जी महाराज कहते हैं कि बहुत छोटे इन्सान को तख्त मिल गया है और औरंगज़ेब को कहते हैं कि तुम्हें यह नाम शोभा नहीं देता। छोटे-छोटे मनुष्यों को भी बहुत बड़े सिंहासन मिल जाते हैं। छोटे-छोटे इन्सानों के पास भी बहुत बड़ी धन-संपदा हो सकती है। धन-संपदा का मतलब तो यह है कि आप सुख लें, परिवार को सुख दें और फिर पड़ोसियों को, किसी और को भी सुख दें। पर यह तो इतना कंजूस है, आप भी सुख नहीं ले सकता, और दूसरों को भी सुख नहीं दे सकता। बड़े-बड़े चोटी के धनी इन्सान मैंने संसारिक तौर पर दुखी देखे हैं, जबकि धन से वे सुख ले सकते हैं। नहीं ले सकते, क्योंकि कंजूस हैं। भक्त कबीर कहते हैं कि कंजूस इन्सान धन का रखवाला होता है, धन का मालिक नहीं होता।

सूमहि धनु राखन कउ दीआ मुगधु कहै धनु मेरा ।।

(अंग ४७९)

कला बहुत बड़ी है पर इन्सान बहुत छोटा है। कविता तो इतनी महान् है कि जलते हुए दीये की तरह है। आप इतना अंधेरे में दिन रात शराब में डूबा रहता है। कहते हैं कि नादिर शाह ने जब दिल्ली में जनसंहार किया और जीत प्राप्त की, लूटा। रात को नर्तकियां बुलाई, नाच हुआ। अर्धरात्रि यह नाच समाप्त हुआ। इनाम में अकराम देकर नर्तकियों को भेजने लगा है नादिर शाह, जाओ। नर्तकियां कहने लगीं कि हमने कम से कम चार मील तक जाना है, रात अंधेरी है। इस अंधेरे में दूरी कैसे तय करें ? कुछ मशालों का इन्तजाम कर दो। पता है नादिर शाह क्या कहता है ? तुमने चार मील जाना है, रास्ते में कोई और गाँव आता है ? रास्ते में चार गाँव आते हैं। पता है नादिर शाह ने अपने सिपाहियों को क्या कहा ? चारों गाँवों

को आग लगा दो। इतनी रोशनी हो जाएगी, जाओ तुम अपने गाँव। चारों गाँवों को आग लगा दी गई। ताकत बहुत ज़्यादा है, इन्सान बहुत छोटा है। छोटे-छोटे मनुष्य को भी बहुत बड़ी प्रभुता मिल सकती है।

इस दायरे में कई बार मैं हैरान होता हूँ कि संतों के भी मुकद्दमे अदालत में चलते मैंने देखे हैं। डेरों के झगड़े, ज़मीन जायदाद के झगड़े। इन झंझटों में पड़ना था तो गृहस्थी बन जाते। यह तो आम संसारिक बात हो गई। बहुत बड़ा डेरा मिल गया बहुत छोटे मनुष्य को। धर्म छोटे मनुष्यों के पास नहीं हो सकता।

एवडु ऊचा होवै कोइ।। तिसु ऊचै कउ जानै सोइ।।

(जपु जी साहिब)

परमात्मा तो मिलता ही उस दिन है, जिस दिन कोई अपने आप को परमात्मा जैसा बना ले। मैं पढ़ रहा था एक महापुरुष की जीवन कथा। आखिरी साँसों पर था और उसके सेवक आस-पास बैठे थे। सेवकों ने हाथ जोड़ कर कहा, "संत जी ! संसार से आप जा रहे हो, जाते-जाते कोई शिक्षा दे जाओ।" जब सारे सेवकों ने विनती की तो बोलने लग पड़े। उन्होंने कहा, "मेरे बच्चो ! मैंने अपनी ज़िन्दगी में कभी किसी से हार नहीं मानी।" सभी बोलने लग पड़े, "जल्दी बताओ, जल्दी बताओ।" कौन हारना चाहता है ? सभी जीतना चाहते हैं। सभी इसलिए बोल पड़े कि यह न हो आखिरी साँस निकल जाए और बात अधूरी रह जाए। वे कहने लगे, "बीच में ही बोल पड़े, बात तो पूरी सुनो। मैं अपनी ज़िन्दगी में कभी किसी से हारा नहीं हूँ। क्यों ? मैंने कभी किसी को जीतने की कोशिश ही नहीं की। पूरी ज़िन्दगी लगा दी अपने मन को जीतने में। दूसरों को जीतने के लिए हिंसा चाहिए, झूठ चाहिए। अपने मन को जीतने के लिए तो दया चाहिए, प्रेम चाहिए, संतोष चाहिए।" यह कभी-कभी इस तरह होता है। सिंहासन तो बहुत छोटा है पर जनक सरीखा राजा तो बहुत बड़ा है।

भगत वडा राजा जनक गुरमुखि माइआ विच उदासी।

कोशिश है मनुष्य धार्मिक हो। बड़े मनुष्य सिंहासन पर बैठे, उनसे सिंहासन छोटा है। मैं अर्ज़ करूँ, परमात्मा बहुत बड़ा है और परमात्मा मिलता ही उस दिन है जिस दिन कोई बहुत बड़ा हो, उससे पहले मिलता ही नहीं। कबीर कहते हैं कि परमात्मा की तलाश न करो। कोशिश करो अपने आप को परमात्मा जैसा बनाने की।

हरि जनु ऐसा चाहीऐ जैसा हरि ही होइ ॥ *(अंग १३७२)*

जिस दिन तू प्रेम की मूर्ति हो जाएगा, निर्वैर हो जाएगा, समदृष्टि हो जाएगा, उस दिन परमात्मा की खोज नहीं करनी पड़ेगी, परमात्मा तेरी खोज करेगा।

कबीर मनु निरमलु भइआ जैसा गंगा नीरु ॥
पाछै लागो हरि फिरै कहत कबीर कबीर ॥ *(अंग १३६७)*

अब तो परमात्मा ढूँढ रहा है, कई बार ऐसा होता है कि मनुष्य बहुत बड़ा है, घर बहुत छोटा है। मनुष्य बहुत महान् है, धन-संपदा बहुत छोटी है। इस तरह की एक घटना हुई श्री गुरु रामदास जी महाराज पर। उपजीविका चने बेच कर चलानी पड़ी। माँ-बाप का साया नहीं। मनुष्य महान् है, घर बहुत छोटा है। मनुष्य महान् है, प्रभुत्ता है ही नहीं। जब बासरके नानी का मनोरंजन करने के लिए आए हैं, तो वृद्ध बाबा आज इस मासूम बच्चे को कहते हैं कि हद हो गई। लोग धैर्य दे रहे हैं उस बूढ़ी माँ को। बाप तो तेरा मृत्यु को प्राप्त हो चुका है, माँ तो तेरी गुज़र गई है। तुझे कोई नहीं पूछता। लोग मनोरंजन तो वहाँ कर रहे हैं। गुस्से से आँखों से देखता है इस वृद्ध बाबा को पर हाथ जुड़ गए इस मासूम बच्चे के। आप जो भी हो मुझे पता नहीं। पता यह कौन था ? गुरु गद्दी मिलने से पहले श्री गुरु अमरदास जी की मुलाकात श्री गुरु रामदास जी से भाई जेठा से। भाई जेठा को बचपन से जाना है, कुछ दिख पड़ा, एक महान् मनुष्य सुनसान घर में आ गया। बाबा फरीद ने बड़ा सुन्दर इस संबंध में एक श्लोक उच्चारण किया है :

हंसु उडरि कोध्रै पइआ लोकु विडारणि जाइ ॥
गहिला लोकु न जाणदा हंसु न कोध्रा खाइ ॥

(अंग १३८१)

उड़ता-उड़ता हंस बाजरे के खेत में आ बैठा है । खेत के रखवाले ने सोचा कोई कौआ बैठा है, कोई चिड़िया बैठी है, कोई कबूतर बैठा है, मारे, उड़ाये, हमारा बाजरा न खा जाये । हंस तो बाजरा खाता ही नहीं । उड़ता-उड़ता बैठ गया संयोग से । इस भोली दुनिया को कौन समझाए कि यह बाजरे का ग्राहक नहीं है, यह मोती का ग्राहक है । कौन बताये ? एक महान् बादशाह का जन्म यतीम घराने में हो गया है। एक सोढी सुल्तान चने बेचता है । एक महान् आत्मा, आस-पास बहुत छोटा है । कभी-कभी इस तरह होता है। श्री गुरु रामदास जी महाराज इतने ऊँचे हैं, जितना ऊँचा परमात्मा है, तो ही उनके नाम का ऐसा तीर्थ बना है जो रूह-ए-ज़मीन पर कहीं भी नहीं है ।

डिठे सभे थाव नही तुधु जेहिआ ॥
बधोहु पुरखि बिधातै तां तू सोहिआ ॥ *(अंग १३६२)*

परमात्मा का महल तो उस दिन मिलता है जब कोई परमात्मा जैसा ही बड़ा हो । अगर आज तक परमात्मा मुझे नहीं मिला तो मैं अपने आप को बड़ा नहीं कर सका । बड़े हम हो सके, परमात्मा ने साधन बनाए हुए हैं। मेरी बाँह पकड़ो और ऊपर उठो । परमात्मा निर्भय है पर मनुष्य भय में जी रहा है । परमात्मा निश्चिंत है, पर मनुष्य चिंता में जी रहा है । यह समस्या है । परमात्मा आनन्द में है पर यह दुख में जी रहा है । तो इस दुख की निवृत्ति किस तरह हो ? यह आज के हुक्मनामे में जो श्री गुरु अर्जुन देव जी महाराज ने दिया है, अर्थ आप श्रवण करो :

सोरठि महला ५ ॥
प्रभ की सरणि सगल भै लाथे दुख बिनसे सुखु पाइआ ॥

जिस दिन से प्रभु की शरण में गये । प्रभु की शरण में जाना क्या है ? हो सकता है जो गुरुद्वारे में आया हो, गुरु के पास न आया हो । मैं हमेशा अर्ज़ करता हूँ कि गुरुद्वारे आ गये, हाजिरी लग गई, सुरति शब्द से जुड़ गई, गुरु की हजूरी में चले गये । हाजिरी तो लाखों भर लेते हैं, पर हजूरी में कोई लाखों में से एक

जाता है। सुरति शब्द से नहीं जुड़ी, हजूरी तो नसीब नहीं हुई, हाजिरी लगाकर चले गये । जिस दिन कोई हजूरी में चला जाता है तो शरण में चला जाता है । एक बाणी को पढ़ना है, एक बाणी को जपना है । पढ़ने के लिए ध्यान बाहर करना पड़ेगा और पढ़ना इसलिए है कि कंठ हो जाए । पढ़ना इसलिए है कि अर्थ बोध समझ आ जाये । पढ़ना इसलिए है कि किस पातशाह की बाणी है, महला १, २, ३, ४, ५ । जपना इसलिए है कि बाणी का रूप हो जाये :

गावहु सुणहु पड़हु नित भाई गुर पूरै तू राखिआ ।।

(अंग ६११)

जपि मन मेरे गोविंद की बाणी ।। *(अंग १९२)*

पढ़ना सेवा है, सिमरन नहीं है । अगर बाजे पर पोथी रख कर कीर्तन हो रहा है, यह भी बाणी पढ़ना हो रहा है, जपना नहीं हो रहा । जपने और पढ़ने में ज़मीन आसमान का फर्क है ।

सुणिऐ सतु संतोखु गिआनु ।। *(जपुजी साहिब)*

यह पढ़ा है तो इतनी समझ आ गई कि अगर कोई सुने तो संतोषवान् हो सकता है, ज्ञानी हो सकता है, दानी हो सकता है, अगर कोई जपेगा तो जपते ही संतोषी हो जाएगा । जपने के लिए ध्यान अंतर्मुखी करना पड़ेगा । सुनने के लिए ध्यान अंदर चाहिए, पढ़ने के लिए ध्यान बाहर चाहिए । जपना तभी हो सकता है अगर बाणी कंठ हो । अगर बाणी कंठ नहीं तो जपना नहीं हो सकता । फिर समस्या उत्पन्न हो जाएगी कि अनपढ़ इन्सान क्या करे ? बाणी कंठ नहीं । जो पढ़े लिखे होते हैं, बनारस में उन ब्राह्मणों को नियमित डिग्रियाँ मिलती हैं—चतुर्वेदी, त्रिवेदी, द्विवेदी, षटशास्त्री, श्री एक सौ आठ, यह इनको डिग्रियाँ मिलती हैं। यह तो बहुत पढ़े-लिखे हैं और जो ब्राह्मण पढ़ा-लिखा न हो, उसको कहते हैं ओमी । यह बस ओम-ओम जप सकता है, अन्य कुछ नहीं । न वेद पढ़ सकता है, न गीता पढ़ सकता है, न कुरान पढ़ सकता है, न शास्त्र पढ़ सकता है न उपनिषद् पढ़ सकता है।

गुरु नानक देव जी कहते हैं कि अगर पढ़-लिख कर गुनहगार है। पढ़ाई में तो ध्यान बाहर करना पड़ेगा, गुनाहों से बच नहीं सकता। ध्यान तो बाहर है। बाहर सब कुछ मैला है, ध्यान मैला होगा। छोटे-छोटे गुनाह ही अनपढ़ इन्सानों से होते हैं, बड़े गुनाह कर ही नहीं सकता। एक बड़ा मनुष्य गुनहगार है। कहीं एक-दो आदमियों का कत्ल करेगा, एक छोटा इन्सान पढ़ा-लिखा है। उसने एटम बम बनाया है। एक हिरोशिमा पर गिराया है, डेढ़ लाख इन्सान एक पल में खत्म हो गए थे। अगर अनपढ़ है, वाहिगुरु तो कह सकता है। तेरी जुबान वाहिगुरु कहे और तेरा मन सुने, एक बार वाहिगुरु कहते ही बात बन जाएगी।

इक चिति इक मनि धिआइ सुआमी लाइ प्रीति पिआरो ॥

(अंग ८४५)

पड़िआ होवै गुनहगारु ता ओमी साधु न मारीऐ ॥

(अंग ४६९)

ऐ पुरुष ! तू नहीं बाणी पढ़ सकता, तू भाई गुरदास को नहीं पढ़ सकता, वाहिगुरु-वाहिगुरु तो जप सकता है। शरण में कौन चला गया ? जिसकी सुरति शब्द में जुड़ गई। जो शरण में आ गया है, उसके सारे भय दूर हो गए। सारे दुख उसके समाप्त हो गए। परम सुख की उसको प्राप्ति हो गई।

दइआलु होआ पारब्रहमु सुआमी पूरा सतिगुरु धिआइआ ॥ १ ॥

पूर्ण सतिगुरु में जब ध्यान जोड़ा, उससे जब प्रेरणा ली, वह दया का स्रोत जो परिपूर्ण परमात्मा है, उसका चिंतन किया तो यह अवस्था बन गई। सारे भय मिट गए और सर्व सुखों की प्राप्ति हो गई।

प्रभ जीउ तू मेरो साहिबु दाता ॥

हे प्रभु ! समझ आ गई है, तू ही केवल और एक ही संसार का दाता है, मेरा दाता है। जो कुछ भी मुझे मिल रहा है, मैं इसकी कोई कीमत नहीं चुका रहा, तू दान में दे रहा है। जीवन दान में मिला है, मन दान में मिला है, बुद्धि दान में मिली है, जुबान दान

में मिली है, हाथ दान में मिले हैं, पैर दान में मिले हैं, हवा दान में मिली है, सूर्य की रोशनी दान में मिली है।

तेरे दानै कीमति न पवै तिसु दाते कवनु सुमारु ।।

(कीरतन सोहिला)

तेरा दान बड़ा है।

बडा दाता तिलु न तमाइ ।। *(जपुजी साहिब)*

इतना दान पर तिल जितनी माँग नहीं रखता। जिस में माँग हो, व्यापार हो जाता है। वह तो देता है, लेने की तिल मात्र भी इच्छा नहीं रखता। कहते हैं मनुष्य जो अपनी मेहनत से कमाता है और अपनी मेहनत शरीर से, मन से करेगा, यह भी परमात्मा का दिया हुआ दान है। उसकी कद्र करता है। तन मिला दान में, मन मिला दान में, इसकी कद्र ही नहीं करता। साहिब कहते हैं कि हे प्रभु! तू मेरा मालिक है।

करि किरपा प्रभ दीन दइआला
गुण गावउ रंगि राता ।। रहाउ ।।

हे प्रभु! दीनों पर दया करने वाले! हर समय दया के स्रोत! रहमत कर, कृपा कर, तेरे गुण गाऊँ, पर रंग में, रस के बीच। सुरति जुड़ जाए, तो रस बन जाता है, न जुड़े तो नहीं बनता। ऐसे है जैसे शरबत का गिलास मेरे मुँह में पड़े तो रस बनेगा, मेरे हाथ में है तो रस नहीं। शब्द से, गुणों से मेरा हृदय जुड़ गया है तो रस तो बन जाएगा, पर गुणों को मैं गायन कर रहा हूँ। अगर सुरति मेरी नहीं तो कोई रस नहीं।

सतिगुरि नामु निधानु द्रिड़ाइआ चिंता सगल बिनासी ।।

वह जो नाम का खज़ाना है, सतिगुरु ने रहम करके उसके बीच दृढ़ता कर दी है, सुरति जुड़ गई है। इससे सारी चिंता नष्ट हो गई। चिंता है, किस बात की ? कम से कम मेरे साथ ऐसा नहीं होना चाहिए, पर अंदर चिंता है कहीं हो न जाए। दूसरा ऐसा होना चाहिए मैं चाहता हूँ, पर अंदर चिंता है कदाचित न हो। सतिगुरु

की बाणी यह कहती है कि जो होता है, वह होता है। जो नहीं होता, वह नहीं होता। नाम में जिसकी दृढ़ता होती है, वह इस बात को समझ लेते हैं। हर समय आनन्द में, कोई चिंता नहीं। गुरु तेग बहादुर साहिब जी के उस श्लोक को भी नहीं समझा :

चिंता ता की कीजीऐ जो अनहोनी होइ ।। *(अंग १४२९)*

अगर अनहोनी होती है तो चिंता करो। अनहोनी तो होती नहीं, सतिगुरु यह कह रहे हैं। कभी दम टूटने लगे तो यह कहता है अनहोनी हो गई। अनहोनी थोड़ी है। आना जाना तो उसका हुक्म है। होनी होती है, अनहोनी तो होती नहीं।

करि किरपा अपुनो करि लीना मनि वसिआ अबिनासी ।। २ ।।

प्रभु ने कृपा करके अपना बना लिया। वह अविनाशी हृदय में बस गया। सारी परेशानियों का अंत हो गया।

ता कउ बिघनु न कोऊ लागै जो सतिगुरि अपुनै राखे ।।

जिनको सतिगुरु अपना बना कर रक्षा करता है, रखवाला बनता है, उनको प्रभु यश गायन करने में कोई विघ्न नहीं पड़ता। जपते रहते हैं, आनन्द लेते रहते हैं।

चरन कमल बसे रिद अंतरि अंम्रित हरि रसु चाखे ।। ३ ।।

हमारे देश में धर्म की प्राप्ति की कमल से तुलना दी गई है। कमल धर्म का प्रतीक है। पैदा तो कीचड़ में होता है, पर कीचड़ और जल दोनों से ऊँचा हो जाता है। डूबता नहीं। मनुष्य का जन्म तो काम से है, कीचड़ से है। अगर राम हो गया तो कमल जैसा। जन्म काम से हुआ है और जीवन भी काम में, मृत्यु समय भी काम में, यह तो कीचड़ हुआ और कीचड़ में ही फँसा रह जाएगा, परमात्मा के गुण कमल जैसे हैं, निर्लिप्त हैं। प्रभु निर्लिप्त है, प्रभु के चरण-कमल हृदय में बस गए। उसके गुण हृदय में बस गए, जो कमल जैसे होते हैं। इस तरह सतिगुरु रखवाला हुआ है। हर प्रकार रक्षा की है।

करि सेवा सेवक प्रभ अपुने जिनि मन की इछ पुजाई ।।

यहाँ प्रेरणा देते हैं, हे गुरमुख ! तू सेवा कर, प्रभु की सेवा कर। और

हरि की टहल कमावणी जपीऐ प्रभ का नामु ।।

(अंग ३००)

सेवा क्या करनी है ? जपना है नाम । यहाँ सेवा का अर्थ सिमरन है। परमात्मा की क्या सेवा करोगे ? उसको पानी पिलाओगे जिसने सात समुद्र बनाए हैं। उसको धन दोगे, जिसने सोना पहाड़ों में पैदा किया है ? उसको क्या दोगे ? जो कुछ अर्पण करोगे, उसका दिया ही उसके आगे अर्पण करोगे। उसका सिमरन करो, जिसने मन की सारी इच्छाएँ पूरी कर दी हैं।

नानक दास ता कै बलिहारै
जिनि पूरन पैज रखाई ।। ४ ।। १४ ।। २५ ।।

जिसने इस तरह पूरी लाज रखी है, मैं उस परिपूर्ण परमात्मा का आदर करता हूँ, बलिहारी जाता हूँ। साहिब रहम करें, सब दुख मिटने पर परम आनन्द की प्राप्ति हो। भूल चूक की क्षमा।

वाहिगुरु जी का खालसा ।।
वाहिगुरु जी की फतह ।।

जपि मन सति नामु सदा सति नामु

धनासरी महला ४ ॥

इछा पूरकु सरब सुखदाता हरि जा कै वसि है कामधेना ॥
सो ऐसा हरि धिआईऐ मेरे जीअड़े
ता सरब सुख पावहि मेरे मना ॥ १ ॥
जपि मन सति नामु सदा सति नामु ॥
हलति पलति मुख ऊजल होई है
नित धिआईऐ हरि पुरखु निरंजना ॥ रहाउ ॥
जह हरि सिमरनु भइआ तह उपाधि गतु कीनी
वडभागी हरि जपना ॥
जन नानक कउ गुरि इह मति दीनी
जपि हरि भवजलु तरना ॥ २ ॥ ६ ॥ १२ ॥ *(अंग ६६९-७०)*

वाहिगुरु जी का खालसा ॥ वाहिगुरु जी की फतह ॥

सम्मानयोग्य गुरु रूप साध संगत जी ! महान् वाक्य श्री गुरु रामदास जी महाराज का है, जिस में कहा गया है कि धर्म का सिद्धांत एक नुक्ता है। धर्म की मूल बात इसके बीच वर्णन कर दी है। समस्या क्या है ? मनुष्य दुखी है। उपाधी में है, व्याधि में है। समाधान क्या है ? जप।

जपि मन सति नामु सदा सति नामु ॥

मूल बात है। जैसे-जैसे जागृति बढ़ती है, वैसे-वैसे दुख बढ़ता है। जैसे :

कई जनम सैल गिरि करिआ ॥ *(अंग १७६)*

बहुत लम्बे समय तक हम पत्थर भी रहे। कुछ समय पश्चात् हज़ारों लाखों सालों की यात्रा के बाद पत्थर मिट्टी बने। हज़ारों लाखों सालों की यात्रा के बाद मिट्टी वनस्पति बनी। फिर इस तरह ही लाखों सालों की यात्रा के बाद यह वनस्पति कीड़े-मकौड़े, पशु-पक्षी बने। चलता फिरता जीवन बना। फिर पशु जगत को लाखों साल लग गए मनुष्य होने में। मूल पत्थर है। कहते हैं ज़मीन सूर्य का हिस्सा है, अरब खरब सूर्य जो परमात्मा से बने और एक-एक सूर्य के कई-कई टुकड़े। उन टुकड़ों में से एक धरती है। आग का ही गोला था। धीरे-धीरे ठण्डी हुई और पत्थर बनी। यह पत्थर बाद में मिट्टी बने।

पत्थर यात्रा में है। मिट्टी होगी, मिट्टी होना इसकी मंज़िल है। मिट्टी यात्रा में है। मिट्टी का वनस्पति होना अपने घर तक पहुँचना है। वनस्पति भी यात्रा में है। इस वनस्पति का पशु हो जाना, पंछी हो जाना, कीड़े-मकौड़े हो जाना अपना घर ढूँढ लेना है। क्योंकि वनस्पति में ही चाहत थी मैं एक स्थान से दूसरे स्थान पर नहीं जा सकती। वृक्ष चल फिर नहीं सकते। मुझे चलता-फिरता जीवन मिले। पशु पक्षी भी यात्रा में हैं। एक दिन मनुष्य बनता है। भारत का चिंतन यही है। देश के समस्त संतों की इच्छा यही है। मनुष्य बनते हैं। मनुष्य भी सफर में है। मनुष्य का परमात्मा हो जाना बस मंज़िल है। इब्तदा पत्थर, आखरित परमात्मा। शुरुआत पत्थर समाप्ति परमात्मा। पत्थर न दुखी होता है, न सुखी होता है, न खिलता है, न मुरझाता है। एक ब्रह्मज्ञानी की तरह पड़ा है। चार गालियाँ निकाल दो, कुछ असर नहीं, उपमा कर दो, हाथ जोड़ो, तिलक लगाओ, इस पत्थर को कुछ भी फर्क नहीं पड़ता। सर्दी हो, कुछ असर नहीं, गर्मी हो कुछ असर नहीं। मौसम-ए-खिज़ां है, कुछ असर नहीं, मौसम-ए-बहार है, कुछ असर नहीं। चाहे धूप है चाहे छाया है, पर यात्रा तो यहाँ से शुरु हुई। यह पंक्तियाँ याद रखना :

कई जनम सैल गिरि करिआ ॥ *(अंग १७६)*

पता नहीं कितने लम्बे समय तक पत्थर रहा। पत्थर हमारा अतीत है। इसलिए अगर मनोवैज्ञानिक दृष्टिकोण से लें तो मनुष्य ने पत्थर को भगवान मान लिया है। मजबूरी है, यात्रा तो यहीं से ही आरम्भ हुई थी। वनस्पति दुख सुख से न्यारी नहीं है। वनस्पति में खिलना भी है, मुरझाना भी है। यह मौसम-ए-बहार से भी प्रभावित होती है, मौसम-ए-खिज़ां से भी प्रभावित होती है। यह सर्दी से भी प्रभावित होती है, गर्मी से भी प्रभावित होती है। सूर्य डूब गया है, वृक्षों के पत्ते सूख जाते हैं। सूर्य की किरणें पड़ती हैं तो फूल खिलते हैं, पत्ते खिलते हैं। पत्थर तो सोया ही पड़ा है। वनस्पति थोड़ी सी जागी है। आप पत्ता तोड़ो तो पानी भी निकलेगा।

विज्ञान तो यह कहेगा क्योंकि वनस्पति में है ज्यादा पानी। इसलिए निकलता है। यह कोई दलील नहीं। मनुष्य के शरीर में भी 70-75 प्रतिशत पानी है। पर आँखों में से तब ही पानी निकलता है जब कोई दिल को चोट लगे। आप सुनकर हैरान होंगे, जीवन को जो सागर कह दिया है। तीन हिस्से पानी है, एक हिस्सा ज़मीन है। तीन हिस्से हमारे शरीर में पानी है। जितना नमकीन पानी सागर का है, उतना ही नमकीन पानी हमारे शरीर का है। जितना गाढ़ा पानी सागर का है, उतना ही गाढ़ा हमारे शरीर का है। पानी है, पत्ता तोड़ा इसलिए निकल गया है। मैं कहता हूँ कि नहीं, आँसू निकले हैं। तू फल तोड़ रहा है, यह उसके बच्चे हैं, तेरी भी औलाद तेरा फल है। उसको कोई तोड़े मरोड़े, उसको दुख होता है। उसको भी होता है।

दुनिया में इस तरह के संत भी हुए थे, जो तोड़ कर फल नहीं खाते थे। कहते थे गिर जाए फिर खाना है। इतने कोमल थे और इस तरह के कोमल पुरुष मैंने देखे हैं। दुख जागने से शुरु होता है। देखते हैं हम शरीर का चीर-फाड़ कर रहा है डाक्टर और शरीर को बेहोश कर दिया है। सोये हुए को क्या पता चलना है ? जागेगा तो पता चलेगा। मनुष्य की यह जो चाहत है कि मैं दुख सुख से ऊँचा उठ जाऊँ। खुशी और गम से ऊँचा उठ जाऊँ। दिन रात की पकड़ से ऊँचा उठ जाऊँ। यह जो प्राणों में प्यास है, इस तरह की ज़िन्दगी यह जी चुका है, पत्थर के रूप में। मैंने

देखी है वह दुनिया, क्लेश संताप नहीं है, आनन्द और मस्ती भी नहीं है। एक ज्ञानी आखिर ऊँचा उठ ही जाता है।

जो नरु दुख मै दुखु नही मानै ॥
सुख सनेहु अरु भै नही जा कै कंचन माटी मानै ॥

(अंग ६३३)

ब्रह्मज्ञानी दुख सुख महसूस नहीं करता, क्योंकि वह पूरा जागा हुआ है। पत्थर तो किनारे पर खड़ा है, ब्रह्मज्ञानी पार खड़ा है या तो बिल्कुल पार हो जाए ब्रह्मज्ञानी की तरह तो सुख है। वनस्पति दुखी है, थोड़ी सी जागी है। कबीर कहते हैं :

पाती तोरै मालिनी पाती पाती जीउ ॥
जिसु पाहन कउ पाती तोरै सो पाहन निरजीउ ॥

(अंग ४७९)

कम से कम तू पत्थर को उठा कर फूल के आगे भेंट करे तो बात समझ में आती है। फूलों को तोड़ कर पत्थर के आगे भेंट करे, यह बात समझ में नहीं आती, मैं अपना मस्तक उसके कदमों पर रखूँगा जो मुझसे बड़ा है। कहते हैं जो अपने से मूर्ख के कदमों पर सिर रखता है, उससे मूर्खता ही प्राप्त होती है। फूलों को पत्थर के चरणों में, यह तो ऐसे है जैसे पिता पुत्र के पैरों पर पड़ा है। तुझे इतना भी पता नहीं कि तुच्छ चीज़ महान् के आगे भेंट की जाती है। अगर महान् के आगे उससे भी बड़ी महान् चीज़ भेंट की गई है तो उस महान् वस्तु की तौहीन है। अगर मैं सिर भी गुरु के आगे रख दूँ तो भी मेरे सिर से गुरु बहुत बड़ा है। अगर मेरा सिर ही बड़ा है, गुरु कुछ भी नहीं तो फिर बात न बनी। हँसना, रोना, खिलना, मुरझाना फूलों में भी है, पर पत्थर में नहीं। पर कमाल की बात है, फूल पत्थर के आगे भेंट? कबीर कहते हैं कि पूरा संसार भूल गया है सिर्फ माली ही नहीं, माली के पास जो फूल लेते हैं, वे भी भूले हुए हैं। माली तोड़े ही न फूल, जो पत्थर के आगे भेंट करने वाले न हो।

लोग कब्रों पर भी फूल भेंट करते हैं। जो ज़िन्दगी मुरझा गई है वहाँ खिली हुई ज़िन्दगी भेंट करते हैं। कुछ तो फूल की इज़्ज़त

रखो। जितना इन्सान चेतन होगा, समझ आएगी। वनस्पति से आगे है पशु पक्षी। पत्थर के आगे पशुओं को भी भेंट किया जाता है। दस बारह बकरे काट कर मूर्ति के आगे भेंट किये जाते हैं। वनस्पति से पशु दुख सुख ज़्यादा महसूस करता है। क्यों ? जहाँ पत्थर में भूख प्यास नहीं है, वहाँ वनस्पति में प्यास तो है, भूख नहीं है। पानी चाहिए, अगर इसको पीने के लिए पानी न मिले तो रोएगी, मुरझाएगी, सूख जाएगी, पर पशु ने पीना भी है, खाना भी है। सिर्फ प्यास ही नहीं है, भूख भी है। पत्थर में न भूख है न प्यास। इससे पता लगता है कि पत्थर बिल्कुल अचेत है। प्यास, भूख जगे हुए को महसूस होती है। आगे इन्सान है। इसके अंदर भूख भी है, प्यास भी है, कामनाएँ भी हैं। ज़ोर से मुझे प्यास लगी है, पानी नहीं है तो दुख है। ज़ोर से मुझे भूख लगी है, भोजन नहीं है तो दुख है।

वनस्पति से ज़्यादा पशु जागे हुए हैं। ज़्यादा दुख–सुख महसूस करते हैं। ज़्यादा खुश होते हैं। दुखी भी होते हैं, चीखते भी हैं। मनुष्य पशु से ज़्यादा जागे हुए हैं। मनुष्य के अंदर भूख प्यास शायद पशुओं से ज़्यादा नहीं है। भूख जितनी शेर के अंदर है, हाथी के अंदर है, मनुष्य के अंदर नहीं है। जितना पानी एक समय में हाथी पी सकता है, मनुष्य नहीं पी सकता, पर कोई वनस्पति, पशु इतना दुखी नहीं है, जितना मनुष्य दुखी है। सब पशुओं के पास इतना दुख नहीं, जितना एक मनुष्य के पास दुख है। सब पक्षियों के पास इतना दुख नहीं, जितना मनुष्य के पास है। पर यहाँ प्रश्न पैदा होता है कि प्यास और भूख में पशु मनुष्य से आगे हैं, इसलिए मनुष्य से ज़्यादा दुखी होने चाहिएँ। नहीं, तन के साथ इन्सान के पास मन है। तन में भूख प्यास है, मन में ख्वाहिशें हैं। प्यास की पूर्ति न हो, वनस्पति दुखी होती है। भूख, प्यास की पूर्ति न हो, पशु दुखी होते हैं। भूख, प्यास, कामनाओं की पूर्ति न हो, मनुष्य दुखी होता है।

मैं अर्ज़ करूँ, भूख, प्यास की पूर्ति हो सकती है, कामनाओं की पूर्ति नहीं होती। यह शब्द की पहली पंक्ति है। 20–25 साल तक जो मैं अर्थ करता रहा हूँ और मानता रहा हूँ, उसने मेरे अंदर

तर्क पैदा किया कि या तो जप करने से कोई इच्छा की पूर्ति नहीं होती, कहते हैं गुरु रामदास तो कहने लगे, गुस्ताखी माफ। क्योंकि इच्छाएँ भी मौजूद है, जप भी मौजूद है या फिर ऐसा है कि मेरे जप करने का ढंग ठीक न हो। जिस दिन संसार की कोई आशा नहीं रहती, निरंकार की आशा उस दिन पैदा होती है। जिस दिन पदार्थों की कोई प्यास नहीं रहती, उस दिन परमात्मा की प्यास पैदा होती है। उससे पहले अगर मैं मंदिर, मस्जिद, गुरुद्वारे भी आऊँगा तो पदार्थ की प्यास लेकर आएगी। जिस दिन धन की आस पूरी नहीं हुई, धर्म की आस पैदा हो जाएगी। अगर यह पाठ करता है तो धन के लिए कर रहा होगा, धर्म के लिए नहीं। यह दोनों प्यासें इकट्ठी नहीं रहतीं।

ज्ञान तीन तरह का होता है। धर्मात्मा कहते हैं, प्रथम श्रुति। बस मैंने किसी से सुना और मान लिया। इसको कहते हैं श्रुति। समझ मुझे सुनकर आई है। दूसरा बौद्धिक ज्ञान। मैंने निरा सुना नहीं, निरा पढ़ा नहीं, खुद अपना दिमाग भी लगाया है, उसको कहते हैं बौद्धिक। सुनी हुई बात को मैंने अपने मन के अनुकूल बनाना है तो मैं कुछ छान-बीन करता हूँ। 80 प्रतिशत श्रुति के बीच सिर्फ सुना, बस ठीक है। आगे चलकर 15-16 प्रतिशत वह हैं जो सुनकर तुरंत नहीं मानते। सुना है, ज़रा सोचेंगे।

किसी अंग्रेज़ ने किसी ज्ञानी से प्रश्न किया कि गुरु गोबिंद सिंघ ने तुम्हें सिंघ उपाधि दी है और सिंघ तो पशु होता है। शेर तो पशु होता है। यह नाम कोई खास नहीं है। जवाब यह दिया गया कि सिंघ उपाधि दी है पर शेर शेर में फर्क होता है। एक जंगल का शेर होता है, एक सर्कस का शेर होता है। हम सर्कस के शेर हैं। किसी को हम चीरते फाड़ते नहीं हैं। इसका मतलब है रिंग मास्टर के इशारों पर नाचते हैं। सर्कस का शेर क्या होता है? रिंग मास्टर के इशारों पर नाचता है। उसके हाथ में चाबुक होती है बिजली की। उसको चाबुक से चलाता है। यह था सवाल का जवाब। मैं अर्ज़ करूँ इसके बीच तो अक्ल की लड़ाई नहीं। स्वतंत्र शेर किसी की चाबुक के इशारों से तो नहीं चलता। सिंघ शब्द दिया है सिंघ के स्वभाव को देखकर। साहस है, हिम्मत है। अपने से बड़ा भी जानवर हो, डरता नहीं। वह बने बनाए रास्तों

पर नहीं चलता, अपना रास्ता रोज़ नया ढूँढता है। किसी के अंदर साहस बहुत ज़्यादा हो तो कह देते हैं कि सिंघ है। यह तो एक गुण है। उसके स्वभाव को लिया है।

एक तीसरा ज्ञान है, उसको कहते हैं अनुभवी ज्ञान। वह सीधा परमात्मा से आया है। इसको हम इस तरह ले लें कि मैं पानी पीता हूँ जो मेरे घर जल विभाग ने भेजा है। मैंने नल खोला और पी लिया। यह वह पानी है जिसको मैंने छाँटा है, देखा है, फिल्टर किया है। इसमें कितना क्लोरोफिल है, मेरे शरीर के अनुकूल है कि नहीं। मैडिकल साईंस ऐसा कह रही है कि 80 प्रतिशत बीमारियाँ पैदा होती हैं दूषित पानी पीने से। शायद इसलिए हकीम कहते थे तू अब पर्यावरण बदल, पानी बदल ठीक हो जाएगा। यह तीन ज्ञान परस्पर मेल नहीं खाते। जिसके पास श्रुति ज्ञान है और जिसके पास बौद्धिक ज्ञान है; हो सकता है लड़ पड़ें। जिसके पास बौद्धिक ज्ञान है और जिसके पास अनुभवी ज्ञान है, यह भी एक दूसरे से सहमत नहीं होंगे। ब्राह्मण कुछ कह रहा है, गुरु नानक नहीं मानते। मौलवी कुछ कह रहे हैं, गुरु नानक नहीं मानते। यह सिर्फ श्रुति है। यह सूचनाएँ हैं, यह बौद्धिक नहीं हैं।

मैं अर्ज़ करूँ, मनुष्य में मानसिक दुख ज्यादा हैं। कामनाओं की पूर्ति न हो तो इस दुख का इलाज क्या है ? एक तो बैरूनी रूप में इंसान यत्न करते हैं। सिकन्दर करता रहा और हैरान भी होता रहा। इच्छा थी कि सिर्फ यूनान है मेरे पास, एक दो मुल्क और फतह कर लूँ, आनंद आ जाएगा। मुल्क तो मैंने फतह कर लिए हैं, आनंद नहीं आया। चलो और मुल्क फतह कर लूँ। वे भी कर लिए, सुख तो नहीं मिला। मुल्क दर मुल्क फतह करता गया, दुख बढ़ता गया। एक मनुष्य लखपति होकर जितना दुखी था, करोड़पति होकर दोगुना दुखी हो गया।

वडे वडे जो दीसहि लोग ।। तिन कउ बिआपै चिंता रोग ।।

(अंग १८८)

ख्वाहिशें बड़ी हैं, पूरी होंगी कि नहीं, चिंता है। गुरु की बाणी कहती है कि आज तक इतना किसी को प्राप्त नहीं हुआ।

सगल स्रिसटि को राजा दुखीआ ।।
हरि का नामु जपत होइ सुखीआ ।। (अंग २६४)

सम्पूर्ण सृष्टि का राजा बन गया है, दुख तो रहेगा। तुम कहोगे इच्छा तो धन की होती है, पदार्थों की होती है। अगर सम्पूर्ण सृष्टि का राजा हो गया, अब तो दुखी नहीं होना चाहिए। इन्द्रियों को जो कुछ चाहिए, सब मौजूद है। जुबान को जो कुछ चाहिए, तरह-तरह के पकवान मौजूद हैं। कानों को जो कुछ चाहिए, गीत संगीत मौजूद है। आँखों को जो कुछ चाहिए, रंग रूप मौजूद है। त्वचा को जो कुछ चाहिए सब कुछ मौजूद है। मैं इस तरह कहना नहीं चाहता, पर मेरी समझ में जो आया है, कह रहा हूँ कि कोई इच्छा की पूर्ति नहीं होती, नाम जप कर। आप कहोगे मैं प्रभु नाम की तौहीन कर रहा हूँ। नहीं, यही उपमा है, घर में दादा रुखसत होता है तो पोतों का जन्म होता है। कई बार दादा के होते हुए पोते, पड़पोते एक रुखसत होता है, दो आ जाते हैं। एक इच्छा पूरी होती है, चार पाँच पैदा हो जाती हैं। ज़िन्दगी भर ख्वाहिशें तो बढ़ती ही रहती हैं। किसकी पूरी हुई हैं।

आसा मनसा सगल तिआगै जग ते रहै निरासा ।।
कामु क्रोधु जिह परसै नाहनि तिह घटि ब्रहमु निवासा ।।
(अंग ६३३)

कैसे निराश करें? आशा निकलती नहीं।

दूधु करम फुनि सुरति समाइणु होइ निरास जमावहु ।।
(अंग ७२८)

निराशा की दही पैदा कर। तेरे पास दही नहीं तो मक्खन कहाँ। दही क्या है? निराश हो गया मैं। कोई आस नहीं। परमात्मा की प्यास क्यों नहीं पैदा होती? संसार की प्यास पूरी हो तो वह जागे। गुरु नानक देव जी कहते हैं :

आसा विचि अति दुखु घणा मनमुखि चितु लाइआ ।।
(अंग १२४९)

जिसने अपना मन ख्वाहिशों से लगाया है, वह महामूर्ख है और महादुखी है। ऐसा कौन-सा इन्सान है जो संसार की इच्छा रखकर गुरुद्वारे नहीं आता। मुझे पता नहीं कितनों ने कहा, ज्ञानी जी ! यह हमारी कामना है अरदास करो। मैंने कहा इस तरह करना मैंने छोड़ दिया है। इस आधार पर कई कह देते हैं कि यह इन्सान नास्तिक लगता है। अति दुखी कौन होगा, जिसके अंदर प्रबल इच्छा होगी। भक्त सूरदास का सुर सागर एक ग्रंथ है, उसकी एक पंक्ति ने कई दिन मुझे सोचने पर मजबूर किया :

कहो रे आस निरास भई।

हे प्रभु ! सारी आशाएँ निराशा में बदल गईं। जिस दिन मनुष्य संसार से निराश होता है, उस दिन राम की आशा पैदा होती है, उससे पहले नहीं होती। लगभग 99 प्रतिशत लोग धन की खातिर धर्म छोड़ने के लिए तैयार हो जाएँगे। धर्म की खातिर धन नहीं छोड़ते। परमात्मा क्यों छोड़ा है ? पदार्थों की खातिर। निरंकार को क्यों छोड़ा है ? संसार की खातिर। बहुत बड़े-बड़े आसनों के ऊपर बहुत छोटे इन्सान बैठे हैं। मनोकामना की पूर्ति के लिए तरह-तरह के आडम्बर रचाते हैं। सारी आशीषें अंदर ही आ जाती हैं।

देहु सजन असीसड़ीआ जिउ होवै साहिब सिउ मेलु ॥

(कीरतन सोहिला)

पूता माता की आसीस ॥
निमख न बिसरउ तुम्ह कउ हरि हरि सदा भजहु जगदीस ॥

(अंग ४९६)

इससे बड़ी भी कोई आशीष है। इन्सान दुखी है, इच्छाएँ हैं। निवृत्ति का साधन क्या है ? जप है। जप से इच्छाओं की पूर्ति हो जाती है ? नहीं। जप से इच्छाएँ खत्म हो जाती हैं। कोई इच्छा रहती नहीं। मूल बात जप है। तेरी इच्छा है, हमारी कोई इच्छा नहीं। उसकी क्या मर्जी है ? जो हो गया मेरे साथ यह उसकी मर्जी है। सब कुछ परमात्मा के हाथ में है।

दातै दाति रखी हथि आपनै *(अंग ६०४)*

तुम्हारे हाथों में जो कुछ भी आ, गया है, गलत नहीं हो सकता। तेरे हाथ जब गलत नहीं तो तेरे हाथों से जो कुछ मुझे मिला है, वह किस तरह गलत हो सकता है? अगर कड़वा फल भी आ गया है तो हे प्रभु! तुम ने शायद इसलिए मुझे कड़वा फल दिया है, कहीं मेरे शरीर में मीठे ने ज़हर पैदा कर देना है। मनुष्य कह देता है यह कड़वा फल हमारे लिए, हे प्रभु! यह क्या? इसके बिना तेरे वह रोग ठीक नहीं होने थे जो मीठे से हो गए। इसके बिना वह कष्ट दूर नहीं होने थे जो सुख से हो गए हैं। उसकी क्या मर्जी है? जो हो गया मेरे साथ, यह उसकी मर्जी है। इस तरह के मनुष्य की कोई इच्छा नहीं रहती। जप करने से बनती है। जप करते-करते यह अवस्था बन जाती है। प्रभु ने सब इच्छाएँ पूरी कर दीं। सब इच्छाएँ कब पूरी होती हैं?

सभे इछा पूरीआ जा पाइआ अगम अपारा ।।

(अंग ७४७)

जब तेरी प्राप्ति हो जाए तो सब कुछ प्राप्त हो जाता है। जितनी देर तक तेरी प्राप्ति नहीं होगी, इच्छा चलती रहती है। एक विद्वान कहता है :

सब कुछ खुदा से माँग लिया खुदा को माँग कर।
उठते नहीं हैं हाथ मेरे इस दुआ के बाद।

खुदा को कहता है कि क्या माँगू? खुदा ने कहा मुझे माँग। तुझे देकर मुझे खुशी होगी। यह कहता है, हे खुदा! जिस दिन से तुझे माँगा है, उस दिन से और कुछ माँगना फीका लगता है। जिस दिन से तेरी इच्छा जागी है, कोई इच्छा नहीं रही। जिस दिन से तेरी प्यास पैदा हुई है, सारी प्यास खत्म हो गई है। जिस दिन से तेरी भूख जागी है, सारी भूख मिट गई है।

साचु नामु अधारु मेरा जिनि भुखा सभि गवाईआ ।।

(अंग ९१७)

धनासरी महला ४

इछा पूरकु सरब सुख दाता हरि जा कै वसि है कामधेना ।।

मनुष्य दुखी है कामना के कारण और परमात्मा का नाम ही कामधेनु है। कहते हैं कल्पना है कि एक ऐसी गाय कामधेनु है, कोई कामना करो पूरी हो जाती है। कामनाएँ तो बाढ़ की तरह आती हैं। कौन-कौन सी पूरी करे यह गाय ? जब परमात्मा आता है, सब कुछ आ जाता है। वह परिपूर्ण परमात्मा का नाम जप से प्राप्त होता है। सब इच्छाओं की पूर्ति कर देता है। सब कामनाओं को पूरा करना जिसके अधीन है, उसने सब इच्छाओं की पूर्ति कर दी है। अब कोई इच्छा नहीं रही।

सो ऐसा हरि धिआईऐ मेरे जीअड़े
ता सरब सुख पावहि मेरे मना ॥ १ ॥

हे मेरे मन ! इस तरह के परिपूर्ण परमात्मा में ध्यान लगा जो सब इच्छाओं को मार देता है। इस बात को वह इन्सान नहीं समझेगा जिसके अंदर प्रबल इच्छा है और आया ही इच्छाओं के लिए है।

जपि मन सति नामु सदा सति नामु ॥

वह जो सत्य है उसका नाम हे मन ! जप मानसिक अवस्था है, जप मन ने करना है।

हलति पलति मुख ऊजल होई है
नित धिआईऐ हरि पुरखु निरंजना ॥ रहाउ ॥

वह जो पूर्ण है, वह जो अञ्जन से रहित है, कालिमा से रहित है, नित्य उसमें ध्यान लगाना है, ताकि सदा सुख और परमानंद की प्राप्ति हो।

जह हरि सिमरनु भइआ तह उपाधि गतु कीनी
वडभागी हरि जपना ॥

जहाँ प्रभु का सिमरन चल पड़ता है, आधि, व्याधि, उपाधी वहाँ सब खत्म हो जाते हैं। आधि रोग जो जन्म से चलता है। व्याधि, कोई शरीर में पीड़ा खड़ी हो गई है। उपाधी, अचानक कोई हादसा हो गया है। ख्वाबो-ख्याल में भी नहीं, संताप उत्पन्न हो गया। अचानक ज़िन्दगी मुसीबत में पड़ गई है। साहिब कहते हैं,

जहाँ प्रभु का सिमरन है, वहाँ इस तरह का कोई विघ्न नहीं रहता। इस तरह वह मनुष्य उपाधी से रहित हो जाता है। पर इस तरह का जप जिसका हिस्सा बहुत बड़ा है, जिसके संस्कार बहुत प्रबल हैं, जिसकी सूझ-बूझ बहुत प्रबल है और जिसने अपनी सूझ-बूझ से अनुभव प्राप्त कर लिया है, वही यह जप करता है और इस अवस्था को प्राप्त कर लेता है।

जन नानक कउ गुरि इह मति दीनी
जपि हरि भवजलु तरना ।।

गुरु ने, उस परिपूर्ण परमात्मा ने नानक को यह मत दिया है। क्या ? जप करो और भवजल से पार हो जाओ। केवल उसका जप ही है जो जगत से पार कर देता है। पानी का स्वभाव डुबोना नहीं है, नहीं तो कुत्ते डूबें, बिल्लियाँ डूबें, गधे डूबें। संसार का स्वभाव ही नहीं है किसी को खत्म करना। मनुष्य खत्म हो जाता है, परिवार में, संसार में। संतुलन बिगाड़ देता है, मनुष्य पानी में डूब जाता है। पशु संतुलन बिगाड़ नहीं सकते, क्योंकि उनके अंदर भय पैदा हो, इस तरह की मानसिक स्थिति नहीं है। मुर्दे तैरते हैं। साहिब कहते हैं उस परिपूर्ण परमात्मा ने समझ दी है और उसका जो जप है, वह नाव है। साहिब रहमत करें। भूल चूक की क्षमा।

वाहिगुरु जी की खालसा ।।
वाहिगुरु जी की फतह ।।

सतिगुरु मिलै त सोझी होइ

रामकली महला १ ॥
साहा गणहि न करहि बीचारु ॥
साहे ऊपरि एकंकारु ॥
जिसु गुरु मिलै सोई बिधि जाणै ॥
गुरमति होइ त हुकमु पछाणै ॥ १ ॥
झूठु न बोलि पाडे सचु कहीऐ ॥
हउमै जाइ सबदि घरु लहीऐ ॥ १ ॥ रहाउ ॥
गणि गणि जोतकु कांडी कीनी ॥
पड़ै सुणावै ततु न चीनी ॥
सभसै ऊपरि गुर सबदु बीचारु ॥
होर कथनी बदउ न सगली छारु ॥ २ ॥
नावहि धोवहि पूजहि सैला ॥
बिनु हरि राते मैलो मैला ॥
गरबु निवारि मिलै प्रभु सारथि ॥
मुकति प्रान जपि हरि किरतारथि ॥ ३ ॥
वाचै वादु न बेदु बीचारै ॥
आपि डुबै किउ पितरा तारै ॥
घटि घटि ब्रहमु चीनै जनु कोइ ॥
सतिगुरु मिलै त सोझी होइ ॥ ४ ॥
गणत गणीऐ सहसा दुखु जीऐ ॥
गुर की सरणि पवै सुखु थीऐ ॥
करि अपराध सरणि हम आइआ ॥
गुर हरि भेटे पुरबि कमाइआ ॥ ५ ॥

गुर सरणि न आइऐ ब्रहमु न पाईऐ ।।
भरमि भुलाईऐ जनमि मरि आईऐ ।।
जम दरि बाधउ मरै बिकारु ।।
ना रिदै नामु न सबदु अचारु ।। ६ ।।
इकि पाधे पंडित मिसर कहावहि ।।
दुबिधा राते महलु न पावहि ।।
जिसु गुर परसादी नामु अधारु ।।
कोटि मधे को जनु आपारु ।। ७ ।।
एकु बुरा भला सचु एकै ।।
बूझु गिआनी सतगुर की टेकै ।।
गुरमुखि विरली एको जाणिआ ।।
आवणु जाणा मेटि समाणिआ ।। ८ ।।
जिन कै हिरदै एकंकारु ।।
सरब गुणी साचा बीचारु ।।
गुर कै भाणै करम कमावै ।।
नानक साचे साचि समावै ।। ९ ।। ४ ।। *(अंग ९०४-०५)*

सम्मानयोग्य गुरु रूप साध संगत जी !

वाहिगुरु जी का खालसा ।। वाहिगुरु जी की फतह ।।

रामकली राग के अंदर श्री गुरु नानक देव जी महाराज का यह महा-वाक्य है, जिस में एक मूल नुक्ते को श्री गुरु नानक देव जी महाराज ने हमारे सामने रखा है। ज़मीन के ऊपर केवल मनुष्य ही है जिसको बड़ी प्रबल भविष्य की चिंता है। कल कैसा होगा ? इसको जानना चाहता है। मनुष्य कुछ ऐसा समझता है कि कुछ निश्चित हो और मैं निश्चिंत हो जाऊँ। अगर कुछ निश्चित नहीं तो मैं निश्चिंत कैसे होऊँ जैसे सबसे बड़ी घटना है मौत। कुछ निश्चित नहीं है। कब होनी है ? हमारे तल पर कुछ भी निश्चित नहीं है। परमात्मा के तल पर तो निश्चित है। जब से मनुष्य ने होश सम्भाली है, तब से इस यत्न में रहा है कि कुछ पता चले कि कल क्या होना है। चिंता का संबंध भविष्य से है, भूतकाल से नहीं है।

कहते हैं जिस चीज़ की माँग हो, मार्किट में कोई न कोई उसकी पूर्ति करने के लिए आ जाता है। एक ईश्वरीय नियम है। यह पूर्ति अगर सही ढंग से न हुई तो गलत ढंग से होगी। जैसे बाज़ार में खरा सोना भी है और खोटा भी है। हीरे भी हैं, पर काँच भी हीरों की तरह चमकता है। कई बार काँच हीरे से ज़्यादा चमकता है। कई बार मुल्लमा सोने से ज़्यादा चमकता है। कई बार झूठ सच से ज़्यादा चमक-दमक रखता है। झूठ को सच बनाना है तो चमकाना पड़ता है, नहीं तो झूठ चल नहीं सकता। मुल्लमा चढ़ा कर बहुत चमकाना पड़ेगा ताकि यह लगे कि यह सोना है।

आदिकाल से इस तरह के इन्सान आगे आए, जिन्होंने स्पष्ट कहा कि हम आपका भविष्य जानते हैं। तुम्हारे माथे की रेखा, तुम्हारे हाथ की रेखा, तुम्हारे पैरों की लकीरें हम देखेंगे। इसके अलावा गणित विद्या चली। उन्होंने यह बताना शुरु किया। ज्योतिष को दो हिस्सों में बाँटते हैं–भलत ज्योतिष, गणित ज्योतिष। जो रेखा बन चुकी है शरीर में यह भलत है। ऐसा होगा उनका ख्याल है। गणित ज्योतिष दिनों की चाल, यह राशियों की चाल, सूर्य एक राशि को छोड़ कर दूसरे राशि में प्रवेश करता है। यह दिन की गर्दिश तेरे लिए क्या सामान पैदा करेगी, तो यहाँ से गणित ज्योतिष ने जन्म लिया।

मैं हैरान हो गया जब मुझे एक सज्जन ने बताया कि अमेरिका, कनेडा में नियमित यह कालेज में विषय है ज्योतिष का। भारत तो ज्योतिषियों से भरा पड़ा है। क्योंकि हर मनुष्य को अपना भविष्य जानने की चिंता है, लाभ में रहूँगा कि नुक्सान में रहूँगा। अमुक जगह मैंने खरीदी है, मैं मकान बनाऊँगा, ठीक रहेगा कि नहीं। अमुक कारोबार मेरे लिए ठीक रहेगा कि नहीं रहेगा। ज्यादातर चिंता संसारिक होती है। जितना इन्सान संसारी होगा, उतना ही चिंता करेगा। चिंता एक प्रबल मानसिक रोग है। चिंतावश मनुष्य हरि का चिंतन नहीं कर सकता। भविष्य की चिंता में इतना लीन है कि यह वाणी में अपनी सुरति कैसे जोड़े ? इसका सारा ध्यान तो आने वाले कल में है और गुटका हाथ में है। वाणी तो पढ़ता है पर ध्यान भविष्य

में है। इसलिए विद्वानों ने धर्म को ध्यान-साधना कहा है। ध्यान जिस का हर समय लड़खड़ाए, वह इन्सान हर समय लड़खड़ाता जाता है।

एक नुक्ता मैं आपके सामने रखूँ। यह आँखें जिसको देख रहीं हैं, उससे ही बोला जा रहा है यह किस तरह पता चलेगा ? जुबान को पता चलेगा या आँखों को ? नहीं, ध्यान करके पता चलेगा कि जिससे मैं बोल रहा हूँ, मैं उसको देख रहा हूँ। जिसको मैं देख रहा हूँ, मैं उस से बोल रहा हूँ। यह पता कैसे चलेगा ? कानों को, आँखों को ? कभी नहीं, यह ध्यान करके पता चलता है। कई बार मनुष्य देखता किसी को है पर बात किसी और से करता है और सुनता किसी और को है। ध्यान लड़खड़ाता है। कांनों की महानता ध्यान के कारण है, जुबान की महानता ध्यान के कारण है, आँखों की महानता ध्यान के कारण है। अगर ध्यान नहीं है तो न मेरी आँखें देख सकेंगी, न मेरे कान सुन सकेंगे, न मेरा बोला हुआ कुछ पता लगेगा। इसलिए जिस दिन शब्द में ध्यान होता है, शब्द सार्थक होता है, नहीं तो नहीं।

हमारे देश में इस तरह के जो ध्यान-साधना करने वाले थे या अब भी हैं, इनमें से एक वर्ग इस तरह का भी था, जो यह जानता था कि देखें और समझें कि मनुष्य के साथ कल क्या होना है ? बड़े-बड़े ज्ञानियों के अंदर भी भविष्य की चिंता थी। भक्त कबीर भी कहते हैं कि पता नहीं कल मेरे साथ क्या होना है ? मैं तो काँप रहा हूँ। कबीर जैसा संत कहे मैं तो भयभीत हूँ और भय से मैं काँप रहा हूँ। पता नहीं परमात्मा ने क्या करना है ? हर मनुष्य के अंदर चिंता है, चाहे वह वैज्ञानिक है, साधु है, संत है, दार्शनिक है, इस पद पर सभी एक जैसे हो जाते हैं। मनुष्य चाहता है कल मेरे साथ ठीक हो गलत न हो। कल मेरे साथ किस तरह ठीक होगा ? इसको ज्योतिषियों ने बताया है कि दिन ठीक हुआ तो कल तेरे लिए ठीक होगा। ग्रह नक्षत्र की चाल ठीक हुई तो तेरे लिए ठीक होगी नहीं तो नहीं।

दूसरा है धर्म ब्रह्म ज्ञान। तुम्हारे आज कर्म ठीक हुए तो कल ठीक होगा, अन्यथा नहीं। आज तेरा बोया हुआ बीज ठीक है तो कल तेरा फल भी ठीक होगा। आज तेरा बोया हुआ बीज गलत है तो कल तेरा फल भी गलत होगा। इन्सान को कहा गया कि तेरे लिए शनिवार ठीक नहीं, मंगलवार भारी है, बुधवार ठीक नहीं। राजस्थान के लोग आज भी बुधवार वाले दिन सफर नहीं करते। विवाह शादी है तो फिर ढूँढे दिन कौन-सा अच्छा है ? उस दिन कन्या की शादी कीजिए। इस पर लोगों को बहुत विश्वास है, अपने कर्मों पर नहीं। पूरे देश के अखबार सप्ताह भर लोगों का भविष्य बताते हैं। लोग मैगज़ीन, रसालों में अपना भविष्य देखते हैं। उनको कौन बताए कि तुम्हारा भविष्य तुम्हारी ज़िन्दगी में है, अखबारों में नहीं।

इस बार जब मैं इंगलैंड जा रहा था। सहज स्वभाव शीशगंज में एक सज्जन मेरे पास बैठा था। पहले तो उसने मुझसे वस्त्र माँगे। कहने लगा कि चोला और पगड़ी दो। मैंने कहा ठीक है। फिर मुझसे कहने लगा, सुना है आप कल इंगलैंड जा रहे हो। मैंने कहा हाँ। कहता है, यह तो वदि चल रही है सुदी नहीं चल रही। अमावस्या के बाद चंद्रमा जब निकलता है तो बढ़ता है, उसको सुदी कहते हैं, और पूर्णमाशी के बाद जब घटता है उसको वदी कहते हैं। मैंने कहा, मैंने तुझे चोला देना था, पगड़ी देनी थी, पर अब नहीं देनी। इतना वहमी इन्सान। मेरा लेखा-जोखा मेरे कर्मों पर खड़ा है। फिर भी मनुष्य को कर्मों पर भरोसा क्यों नहीं आया। इसलिए नहीं आया, बीज तो मैंने आज बोया है, फल तो आज है नहीं। इंतज़ार करना पड़ेगा। महीना, दो महीने, चार महीने। साल भी करना पड़ सकता है, पाँच साल भी करना पड़ सकता है।

जो नियम वनस्पति पर लागू है, जीवन पर भी वही लागू है। इमली 35 साल बाद फलीभूत होती है। तुमने पौधा लगाया और इंतज़ार करो 35 साल। इन्सान कहता है आज तो मैंने अच्छे कर्म किए हैं, नितनेम किया; कमाई का दसवां भाग भी निकाला, सत्संग भी किया, फिर आज मेरे साथ यह घटना क्यों हो गई। धीरे-धीरे

मनुष्य का कर्म से भरोसा हट गया। कर्म मैंने आज किया है, झोली में मेरे दुख पड़ा है। सुबह खुशी-खुशी से मैंने कर्म किया है, शाम को मुझे रोना पड़ा। कर्म से भरोसा हट गया, ज्योतिष पर विश्वास बढ़ गया, शायद दिन ठीक नहीं, शायद ग्रह नक्षत्र की चाल ठीक नहीं, इस पर भरोसा बढ़ गया। अच्छे-अच्छे सत्संगी बढ़ गए हैं। जो झूम-झूम कर कथा कीर्तन सुनते हैं, उनका भी कोई भरोसा नहीं। भरोसा ही तो डगमगाता है। तो ही अरदास है :

डोलन ते राखहु प्रभू नानक दे करि हथ।। *(अंग २५६)*

अगर कुछ हो गया है मेरे साथ तो अकारण नहीं हुआ, उसका कारण है। बिना कारण के कुछ नहीं होता और वह कारण कर्म है। आज मेरे साथ कुछ भी हो गया है, अब मुझे पता नहीं मैंने क्या बोया है।

अपने करम की गति मै किआ जानउ।।
मै किआ जानउ बाबा रे।। *(अंग ८७०)*

समय बहुत हो गया है, पता नहीं मैंने कब बीज बोया था, आज दुख है। पर आज के दुख से मुझे अंदाज़ा लगा लेना चाहिए कि मैंने किसी दिन यह बीज बोया था। बिना बीज से यह फल नहीं होता। एक तो इस भरोसे से जीवन है और दूसरा भरोसा दिन ठीक नहीं था। इस तरीके से पंडितों की, पढ़े-लिखों की शब्दावली है जो इस विद्या को पढ़ते हैं। रहाउ की पंक्ति है :

झूठु न बोलि पाडे सचु कहीऐ।।

हे ज्योतिषी! झूठ बोल रहा है। ज्ञानी हो और झूठ न हो, पंडित हो और झूठ न हो। किसी मूर्ख का झूठ नहीं चलता। क्यों? उसको झूठ को शृंगार कर पेश करना आता है।

मुखि झूठ बिभूखण सारं।। *(अंग ४७०)*

खोटा सिक्का मूर्ख नहीं चला सकता, चालाक इन्सान ही नकली नोट चलाते हैं।

हिदै कपटु मुख गिआनी।। *(अंग ६५६)*

होवे ज्ञानी और कपटी न हो, होवे पंडित और झूठा न हो। गुस्ताखी माफ, सच के मन्दिरों में झूठ चलता है। क्यों चलता है ? झूठ को सच के गहने पहनाने की कला ज्योतिषी को आती है, ज्ञानी को आती है। यह झूठ है कि यह दिन ठीक नहीं था। अगर सब कुछ ग्रह नक्षत्र है तो मुझे कर्मों की फिक्र नहीं करनी चाहिए। मैं फिर अनर्थ करूँ। मेरा भविष्य मेरे कर्मों पर खड़ा है, मेरा भविष्य दिनों पर नहीं खड़ा। मेरा भविष्य सूर्य की चाल पर नहीं खड़ा, मेरा भविष्य ज़िन्दगी की चाल पर खड़ा है। इन दोनों में से मुझे किसी एक को चुनना पड़ेगा। सभी दिन अच्छे हैं, पर मेरे कर्म अच्छे नहीं। सभी रातें अच्छी हैं, पर मेरे कर्म अच्छे नहीं। कुछ घटना घट गई है, दिन तो अच्छा है, मैं अच्छा नहीं हूँ। दूसरा मैं अच्छा हूँ पर दिन बेकार है। इसका एक प्रमाण मिल जाता है, इसलिए कर्मों पर भरोसा नहीं बनता। जिसने दिन बुरा बनाया है क्या वह स्वयं अच्छा है। जिसने रात बुरी बनाई है क्या वह आप अच्छा होगा? जिसका काम ठीक नहीं तो कर्ता भी ठीक नहीं। अगर कविता ठीक नहीं तो कवि किसी का नहीं। अगर तस्वीर मामूली है तो यह मुसव्वर भी मामूली है। गुरु अर्जुन देव जी का फैसला :

माह दिवस मूरत भले ॥

सारे भले हैं। एक दिन भी बुरा नहीं।

माह दिवस मूरत भले जिस कउ नदरि करे ॥
नानकु मंगै दरस दानु किरपा करहु हरे ॥ *(अंग १३६)*

दिन रात सभी अच्छे हैं, महीने तो सभी अच्छे हैं, साल तो सभी अच्छे हैं। 365 दिनों के बाद यह चाल जब पूरी होती है तो एक साल व्यतीत हो जाता है। 24 घण्टों में यह धरती एक चक्र पूरा कर लेती है। धरती दो तरह से घूम रही है। एक तो घूम रही है चक्की की तरह। यह घूमती हुई परिक्रमा भी कर रही है। यह दो तरह का घूमना हो गया। एक तो ऐसे घूम रही है और एक परिक्रमा कर रही है। इस तरह परिपूर्ण परमात्मा ने यह सारी चाल बनाई है। दिन बनाए, महीने बनाए, साल बनाए।

ददै दोसु न देऊ किसै

किसी दिन, महीने, साल को दोषी न ठहरा।

दोसु करंमा आपणिआ ॥ (अंग ४३३)

दोषी हैं तेरे कर्म, यह कर्म तूने किए हैं। अहंकार को बड़ी चोट लगती है अगर कबूल करे, मैं ठीक नहीं। संतोष कराने के लिए पांधे, ज्योतिष मौजूद हैं। तू तो ठीक है, क्या करें दिन अच्छा नहीं है। दूसरा धर्म का यह कहना सब कुछ ठीक है, मैं ठीक नहीं हूँ। अगर मैं ठीक हूँ तो अपना सुधार भी करूँगा। अगर दिन ठीक नहीं तो दिनों का सुधार किस तरह करें ? दिन तो परमात्मा के हाथ में है। सूर्य की चाल को अपने अनुकूल किस तरह बनाएँगे, तू यह कुछ कर, यह हवन कर, यह यज्ञ कर, इतना दान दे, यह कर, वह कर। निकम्मे चक्रों में डाल कर कहेगा मैंने तेरा दिन ठीक करना है। संसार में मूर्ख बहुत हैं। जितनी देर तक मूर्ख हैं, पाखण्ड चलेगा।

मूर्ख सभी एक जैसे होते हैं, कोई फर्क नहीं होता, काँटे सभी एक जैसे होते हैं, फूल सभी एक जैसे नहीं होते। काँटे गुलाब पर भी लग जाते हैं। मूर्ख कई अच्छे घरों में भी पैदा हो जाते हैं। काँटे सिर्फ बबूल को नहीं लगते, काँटे तो गुलाब पर भी होते हैं। बड़े धार्मिक घरों में भी अधर्मी पैदा हो जाते हैं। मूर्खों की गिनती बहुत ज़्यादा है। जब इतनी ज़्यादा गिनती है मूर्खों की तो पाखण्ड तो चलेगा। अधर्म चलेगा। कोशिश थी अवतार पुरुष की कि हर इन्सान के साथ धर्म चले और धर्म चलाएँ। सफलता नहीं मिली एक अवतार को भी।

धरम चलावन संत उबारन दुसट सभन को मूल उपारन ॥

कोशिश थी अवतार पुरुषों की कि काँटे खत्म कर दें, फूल ही फूल महकें। हर जीव संत हो, फूल हो, पर हर जीव काँटा। पड़ोसी पड़ोसी को चुभ रहा है, भाई भाई को चुभ रहा है, बच्चे माँ-बाप को चुभ रहे हैं। यह चुभन पति-पत्नी में भी देख रहे हैं। यह दोस्त नहीं है काँटा है। यह भाई नहीं है, काँटा है। ये बच्चे नहीं हैं, काँटे हैं। काँटों द्वारा खाए हुए ज़ख़्म भी दिखाई देते हैं। लोग ज़ख़्म भी दिखाते हैं। काँटा महाराज के आगे रख दें तो भी

काँटा है। काँटा रास्ते में रख दें तो भी काँटा है। काँटे की फितरत नहीं बदलती।

बठिंडा के एक संत ने बहुत शोर मचाया कि सितम्बर 1997 में सब कुछ तबाह हो जाएगा। लोग सभी प्रभावित थे। शब्द के विचार, शब्द का ज्ञान यह तो कुछ भी न हुआ।

बीओ पूछि न मसलति धरै ।। जो किछु करै सु आपहि करै ।।

(अंग ८६३)

कल मेरे साथ क्या होना है, कुछ भी निश्चित नहीं। मुझे चिंता क्यों है ? क्योंकि निश्चित नहीं है कुछ। मैं निश्चिंत हो सकता हूँ। अगर कुछ निश्चित हो जाए। पढ़ा-लिखा ही मूर्ख होता है। अनपढ़ मूर्ख होगा तो कम ही। ज़्यादा मूर्ख होकर उसके पास इतनी समझदारी नहीं है। जब 97 निकल गया, 98 आ गया, मैंने कहा हुआ तो कुछ भी नहीं, बताओ। कहते उस संत जी ने यज्ञ किया, बड़ा तप किया, उससे सब कुछ ठीक हो गया है। मूर्ख ने पहले बात मान ली थी, मूर्ख ने बाद में भी मान ली। झूठ धर्म के नाम पर बोला जाए, चलेगा। झूठ राजनीति में भी चल जाता है। झूठ कारोबार में भी चल जाता है। दिन भर दुकानदार झूठ बोलता है, ग्राहक मान लेता है। कई बार दुकानदार कहता है कसम से कहता है इतने में मेरी खरीद है और मैं इतने में ही दे रहा हूँ तुम्हें। फिर दुकान पर झख मारने को बैठा है। झूठ परिवार में चलता है।

सबसे ज़्यादा झूठ धर्म में चलता है। क्योंकि हर किसी का भरोसा बंध जाता है कि धार्मिक इन्सान है, गलत थोड़ा कहेगा। कोई मूर्ख इतना बड़ा धोखा नहीं दे सकता। जितना ज्ञानी दे सकता है। सभी जन्म-पत्रियाँ बनाते हैं। लड़के-लड़की का लग्न बताते हैं। कहते हैं ठीक है, दोनों की कुण्डली ठीक बैठी है। दोनों का स्वभाव तो ठीक बैठा नहीं तो तलाक हो गया। तेरी कुण्डली मिलाने से क्या होगा ? फिर भी लोगों का भरोसा जन्म-पत्री पर होगा, यकीन करो, गुरु नानक देव जी की वाणी पर नहीं होगा। आप श्रवण करो :

रामकली महला १ ।।
साहा गणहि न करहि बीचारु ।।

मुहूर्त तो निकाल दिया है, पर विचार नहीं करता, समझने की कोशिश नहीं करता। पंडित हो तो समझे, ज्ञानी हो तो समझे। उसकी शक्ति लग जाती है समझाने में। पंडित की शक्ति लग जाती है सुनाने में पर वह सुने किस तरह ? एक रागी चार घण्टे सुना तो सकता है, पर चार मिनट सुन नहीं सकता। इस पर मुझे एक रुबाई याद आई है। प्रिंसीपल गंगा सिंघ की, सुना दूँ :

दिल सागर सागर की तरह था अति गहरा अड़िआ।
ज्ञान विचार सिदक के मोती पंडित काने घड़िआ।
पर यह बाण कुचजी मेरी बाहर बोल लुटाया।
जप तप की खट्टी न खट्टी खाली फिर दर खड़िआ।

हे प्रभु ! जितने ज्ञान के मोती तूने मेरे अंदर डाले थे, मैंने बोल-बोल कर सारे ही लुटा दिए। हृदय खाली है, कुछ भी नहीं। दूसरी रुबाई मैं तुम्हें आप ही सुना दूँ :

दिल सूरज सूरज के जैसा था पड़ा लश्कारे मारे।
ज्ञान विचार सिदक की किरणें भरी सिरजनहारे।
पर अफसोस मसकीन इस तरह लगा ग्रहण खुदीला।
बोल-बोल कर चमक गवाई घिरा अब अंधियारे।

साहे ऊपरि एकंकारु ॥

पर जो मुहूर्त तूने निकाला है, यह तो महान् सर्वकला समर्थ परमात्मा बैठा है, वह जानता है कि कल किस तरह का होगा। परमात्मा की तरफ से निश्चित है, मेरी तरफ से निश्चित नहीं है। इतना तो पता है कि मरना है। पर कब मरना है, निश्चित नहीं है। मुझे कुछ भी पता नहीं।

जिसु गुरु मिलै सोई बिधि जाणै ॥

यह विधि, यह विधान ईश्वरीय वह जाने जिसको पूरे गुरुदेव का मिलाप हो जाए।

गुरमति होइ त हुकमु पछाणै ॥ १ ॥

हाँ, गुरु को सामने रखकर अपना जीवन व्यतीत करे तो उसको यह पता चल जाएगा कि जो हो गया है, वह हुक्म है। जन्म मरण

के मध्य जितनी घटनाएँ हैं वह हुक्म है। हुक्म मानना मुश्किल है। पहले समझना मुश्किल है।

कहु नानक जिनि हुकमु पछाता ॥
प्रभ साहिब का तिनि भेदु जाता ॥ *(अंग ८८५)*

भेद किसने जाना ? जिसने हुक्म जाना है। आनंद किसको मिला है ? जिसने हुक्म को मान लिया है। भगवान का राज़ किसने जाना है ? जिसने हुक्म को जान लिया है। गुरमुख बन कर ही इसकी सूझ-बूझ मिलती है, समझ मिलती है।

झूठु न बोलि पाडे सचु कहीऐ ॥

हे पंडित ! सच बोल, झूठ न बोल। बाबा फरीद भी कहते हैं :

बोलीऐ सचु धरमु झूठु न बोलीऐ ॥
जो गुरु दसै वाट मुरीदा जोलीऐ ॥ *(अंग ४८८)*

हउमै जाइ सबदि घरु लहीऐ ॥ १ ॥ रहाउ ॥

हाँ, अगर तू अपनी 'मैं' को एक तरफ रखे और हृदय में भक्ति को जन्म दे तो तेरी ज़ुबान पर सच्चाई आ सकती है। फिर तुझे हुक्म की सूझ पड़ सकती है।

गणि गणि जोतकु कांडी कीनी ॥

तूने गणित विद्या को सामने रख कर और ज्योतिष को सामने रख कर जन्म पत्री बनाई।

पड़ै सुणावै ततु न चीनी ॥

जिनकी तूने जन्म पत्री बनाई है, उनको तू पढ़ कर सुना रहा है कि यह तुम्हारे दिन अच्छे होंगे। यह साल तुम्हारे लिए अच्छा होगा। इस तरह का कारोबार करोगे तो ठीक होगा। इस तरह तत्व विचार, जो कर्म का विचार है, उसका चिंतन नहीं किया। उसको समझने की कोशिश नहीं की। लोगों को दिनों के जाल में उलझा रहा है, कर्मों के जाल के बारे में समझने की कोशिश नहीं करता, जबकि खेल तो सारा कर्मों का ही है। परमात्मा के दरबार में कर्मों का विचार होता है।

करमी करमी होइ वीचारु ॥ सचा आपि सचा दरबारु ॥

(अंग ७)

सभसै ऊपरि गुर सबदु बीचारु ॥
होर कथनी बदउ न सगली छारु ॥ २ ॥

तेरी इस जन्म पत्री के ऊपर, तेरी इस विद्या के ऊपर हकीकत में सच का जो विचार है, वह ऊँचा है। उसको समझने की कोशिश कर, इस सब को एक तरफ कर। और कौन सी कथनी है, और जो कहना है, इस सच के बिना उस प्रभु के सिद्धांत को समझे बिना सब व्यर्थ है।

नावहि धोवहि पूजहि सैला ॥

स्नान करता है। पंडित दो वक्त स्नान करता है। सुबह के पहने हुए कपड़े शाम को बदलता है। शाम के पहने कपड़े सुबह बदलता है। पूजा पाठ करते समय रेशमी कपड़े पहनता है। रेशमी कपड़े पवित्र होते हैं। हद हो गई, सूती कपड़े अपवित्र हो गए। एक धोती बनती होगी लगभग पाँच हज़ार कीड़ों को मार कर, रेशम कीड़ों से बनता है। साहिब कहते हैं कि सुबह स्नान करता है और निर्मल होता है और पूजा पाठ करता है। सारा सिलसिला धार्मिक ढंग से करता है, पर भरोसा दिनों पर है, प्रभु पर कोई भरोसा नहीं।

बिनु हरि राते मैलो मैला ॥

बिना हरि रंग में रंगे यह स्नान होते हुए भी मैले का मैला है।

गरबु निवारि मिलै प्रभु सारथि ॥

अगर तू अपने अहंकार को, अपनी समझदारी को एक तरफ रखे तो तुझे परमात्मा सारथी के रूप में मिलेगा। तेरी ज़िन्दगी को चलाने वाला मिल जाएगा। सारथी कहते हैं रथ चलाने वाले को। पूरे संसार को चलाने वाला वह सारथी है।

मुकति प्रान जपि हरि किरतारथि ॥ ३ ॥

इस तरीके से तुझे मोक्ष गति की प्राप्ति होगी। तेरा जीवन सफल होगा।

वाचै वादु न बेदु बीचारै ॥

पढ़ता है और फिर बहस करता है, पर सही जो ज्ञान है, उसका विचार नहीं करता। हमेशा इस तरह के पंडित वाद-विवाद में अपनी ज़िन्दगी को बहुत व्यर्थ गंवाते हैं। ज़िन्दगी बताती है कि गलत चल रही है, पर दूसरों को कहता है, यह अर्थ ठीक हैं, यह अर्थ ठीक हैं।

आपि डुबै किउ पितरा तारै ॥

जब स्वयं ही डूबा हुआ है तो इसका मुहूर्त पितरों को किस तरह तारेगा ? तू दावा करता है कि मैं पितरों को भी पार उतार दूँगा। भक्त कबीर कहते हैं :

हम गोरू तुम गुआर गुसाई जनम जनम रखवारे ॥

हे पंडित ! तू कहता है हम जन्मों-जन्मों से तेरे रखवाले हैं। स्वर्ग में तेरी रक्षा करेंगे, पर :

कबहूं न पारि उतारि चराइहु कैसे खसम हमारे ॥

(अंग ४८२)

कैसा तू मेरा मालिक है ? तुमने मुझे कभी भव-सागर से पार नहीं किया। डुबोया ही डुबोया है। इसलिए अब मैंने नहीं डूबना, तेरी बात नहीं माननी।

घटि घटि ब्रहमु चीनै जनु कोइ ॥

जो प्रभु कण कण में रमा हुआ है, अगर उसका कोई चिंतन करे, तू उसको अपनी याद में लाए।

सतिगुरु मिलै त सोझी होइ ॥ ४ ॥

ऐसा तो हो सकता है अगर तुझे पूरे सतिगुरु से प्रेरणा मिले और इस तरह की समझ तुझे मिल सकती है।

गणत गणीऐ सहसा दुखु जीऐ ॥

चाहे तू गणित विद्या में बहुत निपुण है, पर साहस तो तेरा नहीं जाता। चिंता तो तेरी भी नहीं जाती। दूसरों को निश्चिंत किस तरह करेगा ?

गुर की सरणि पवै सुखु थीऐ ।।

अगर यह गुरु की शरण में आ जाए, उसकी ओट पकड़ ले तो इसको सही सिद्धांतक नुक्ते प्राप्त हो सकते हैं, इसको सुख मिल सकता है ।

करि अपराध सरणि हम आइआ ।।

साहिब कहते हैं कि किए तो तरह-तरह के अपराध हैं, कर्म तो वे किए जो अपराध हैं और भरोसा दिनों पर है । इस तरह का पुरुष जो अपराधी है, गुरु की शरण में आ जाए ।

गुर हरि भेटे पुरबि कमाइआ ।। ५ ।।

अगर कहीं उसके पुराने संस्कार भी हों तो गुरु की भेंट उसको नसीब हो जाए ।

गुर सरणि न आइऐ ब्रहमु न पाईऐ ।।

अगर गुरु की शरण में न आए तो यह सिद्धांतक नुक्ते प्राप्त नहीं होते । इस सच्चाई से मनुष्य दूर हो जाता है । असलियत झोली में नहीं पड़ती ।

भरमि भुलाईऐ जनमि मरि आईऐ ।।

भ्रम, भूलों में मनुष्य पड़ा रहता है । जन्मता रहता है, मरता रहता है ।

जम दरि बाधउ मरै बिकारु ।।

इस तरह विकारों में जीवन व्यतीत करता हुआ यमों की मार सहता है भाव बार-बार जन्म लेता मरता रहता है ।

ना रिदै नामु न सबदु अचारु ।। ६ ।।

न नाम का विचार है, न शब्द का विचार है और जी रहा है इस ढंग के साथ कि दिन अच्छा है, ग्रह अच्छे हैं, महीना अच्छा है ।

इकि पाधे पंडित मिसर कहावहि ।।

एक इस तरह के ज्योतिषी हैं, न नाम का विचार, न शब्द का विचार और पंडित कहलाते हैं, विद्वान कहलाते हैं, मिश्र जी

कहलाते हैं। बहुत सारी इनके पास उपाधियाँ हैं। उन उपाधियों से सम्मान किया है। इनको सम्मान मिलता है, पर अंदर न शब्द का विचार, न नाम का चिंतन।

दुबिधा राते महलु न पावहि ॥

खुद दुविधा में पड़े रहते हैं और इस तरह परमात्मा के महल की इनको प्राप्ति नहीं होती।

जिसु गुर परसादी नामु अधारु ॥

जिस पर गुरु की बख्शिश हो जाए और जो नाम का आसरा लेता है।

कोटि मधे को जनु आपारु ॥ ७ ॥

इस तरह का पुरुष करोड़ों में से एक-आध है जिसको आपार परमात्मा की प्राप्ति हो जाती है। ज्योतिषी होते हुए भी नाम का चिंतन करे, शब्द का विचार करे और गुरु की संगत में आए।

एकु बुरा भला सचु एकै ॥

ब्रह्म दृष्टि में न कोई बुरा है, न कोई भला, न कोई छोटा है, न कोई बड़ा, सब एक हो जाते हैं। इस को इस तरह कहे एक नीचे की ईंट है। एक ऊपर की ईंट है और ऊपर की ईंट मान से कहे तू नीचे पड़ी है। तेरी क्या ज़िन्दगी है। मैं ऊपर हूँ। मैं तो ऊपर गुंबद की ईंट हूँ और तू नीचे की बुनियाद में पड़ी है। पर अब कौन बताए कि कोई ईंट बुनियाद में न हो तो कोई ईंट गुंबद की भी नहीं हो सकती। बड़ों की हस्ती खड़ी है छोटों के सहारे पर। फिर कौन छोटा है और कौन बड़ा है ? साहिब कहते हैं कि ब्रह्म दृष्टि में सब एक ही हो जाता है।

बूझु गिआनी सतगुर की टेकै ॥

हे ज्ञानी ! शब्द की टेक से इस तरह का ज्ञान हासिल कर।

गुरमुखि विरली एको जाणिआ ॥

कोई विरले एक-आध ही हैं जिन्होंने गुरमुख बन कर इस सिद्धांतक नुक्ते को जाना है ।

आवणु जाणा मेटि समाणिआ ॥ ८ ॥

इस तरह उसने अपना जन्म मरण मिटाया है और प्रभु में समा गए ।

जिन कै हिरदै एकंकारु ॥

जिन के हृदय में वह आकार से रहित परिपूर्ण परमात्मा आ बसा है ।

सरब गुणी साचा बीचारु ॥

उसके अंदर सच का विचार है । उसके पास ही सभी गुण हैं । उसके पास ही पूरा आनंद है ।

गुर कै भाणै करम कमावै ॥

जो गुरु की रज़ा में रह कर कर्म कर रहा है, पर किया हुआ कर्म क्या होता है ?

करि करि करणा लिखि लै जाहु ॥ *(अंग ४)*

कर्म मिटता नहीं है, अंदर लिखा जाता है । उसका भरोसा इस बात पर होता है कि जो कुछ हो गया है, यह मेरे लिखे हुए से हुआ है ।

नानक साचे साचि समावै ॥ ९ ॥ ४ ॥

इस तरह का पुरुष सत्य का विचार करता सत्य में समा जाता है । भूल चूक की क्षमा ।

वाहिगुरु जी का खालसा ॥
वाहिगुरु जी की फतह ॥

पारब्रहम परमेसर सतिगुर

बिलावलु महला ५ ॥
जिउ भावै तिउ मोहि प्रतिपाल ॥
पारब्रहम परमेसर सतिगुर
हम बारिक तुम्ह पिता किरपाल ॥ १ ॥ रहाउ ॥
मोहि निरगुण गुणु नाही कोई
पहुचि न साकउ तुम्हरी घाल ॥
तुमरी गति मिति तुम ही जानहु
जीउ पिंडु सभु तुमरो माल ॥ १ ॥
अंतरजामी पुरख सुआमी
अनबोलत ही जानहु हाल ॥
तनु मनु सीतलु होइ हमारो
नानक प्रभ जीउ नदरि निहाल ॥ २ ॥ ५ ॥ १२१ ॥

(अंग ८२८)

सम्मानयोग्य गुरु रूप साध संगत जी !
वाहिगुरु जी का खालसा ॥ वाहिगुरु जी की फतह ॥

श्री गुरु अर्जुन देव जी का बिलावलु राग में एक महावाक्य है। इसमें प्रार्थना है जिसको हम गुरमति की भाषा में कहते हैं अरदास। मनुष्य जो कुछ भी है, जिस तरह भी जी रहा है, इसमें इसकी शिक्षा है जो इसको मिली है। दूसरा यह जिस तरह का है, जिस में यह जी रहा है, इसमें इसकी साधना है। तीसरा यह जिस तरह का है और जिस ढंग से जी रहा है, इसमें प्रार्थना है। यह तीन ढंग हैं–शिक्षा, साधना, प्रार्थना। शिक्षा स्कूल से मिलती

है। शिक्षा माँ-बाप से मिलती है। शिक्षा समाज से मिलती है। शिक्षा विश्वविद्यालय से मिलती है। उसमें मनुष्य पदार्थ के संबंध में जानकारी हासिल करता है। किसी के संबंध में जानकारी हासिल करता है। शिक्षा घर से शुरु होती है। अगर घर से कोई शिक्षा न मिले, माँ-बाप से कोई संस्कार न मिले, स्कूल, कॉलेज में कुछ मनुष्य पढ़े न तो बहुत कुछ अनजाना रह जाएगा।

कुछ वर्ष पहले लखनऊ में एक बच्चा जंगल में से मिला था। भेड़िए उठा कर ले गए थे मनुष्य के बच्चे को और भेड़ियों ने ही पाला उस बच्चे को। मासूम बच्चा रात को अपनी माँ के साथ सोया था, उठा कर ले गए। वह 14 साल बाद मिला। 14 साल भेड़ियों ने दूध पिलाया और बाद में वह चलने फिरने लगा तो वह माँस खिलाते थे। जैसे भेड़िए चार पैरों से चलते हैं, वह भी उस तरह चलता था। बड़े यत्न किए गए उसको बुलाने के, पर वह भेड़ियों की तरह बोलता था, इन्सान की तरह नहीं। कोई शिक्षा ही नहीं मिली उसको। भेड़ियों से जो शिक्षा मिली, भेड़ियों की तरह बोलता था। उसी ढंग से चलता था और उसी ढंग से जीता था। वह भेड़ियों की तरह नंगा रहता था। श्री गुरु नानक देव जी महाराज कहते हैं :

विसमादु नागे फिरहि जंत ।। *(आसा दी वार)*

मनुष्य कपड़े पहनता है पर पशु तो नग्न हैं। मैं विस्मित हो जाता हूँ, मैं विस्मय हो जाता हूँ। मैं हैरानी की अवस्था में चला जाता हूँ। पशुओं को नग्नता का बोध नहीं है। कहते हैं कि मनुष्यता उसी दिन मनुष्यों में आरम्भ होती है, जिस दिन उसको महसूस हुआ कि मैं नंगा हूँ। यह इस्लामी कहावत है। उस बच्चे को कपड़े पहनाते थे, पर फाड़ देता था। चावल रोटी साग सब्ज़ी रखते थे, नहीं खाता था बच्चा, माँस रख दो, खाता था। तीन महीनों में उसको बुलाने की कोशिश की गई। तीन महीनों में बड़ी मुश्किल से वह राम शब्द कहने में कामयाब हुआ। डाक्टरों ने दिन रात मेहनत की। चौथे महीने मर गया। उसको जिंदा रखने के लिए तीन महीनों में लाखों रुपए खर्च हो गए। उसके मरने का कारण डाक्टरों ने बताया

कि 14 साल जिस तरह के माहौल में वह जीया था, यह माहौल उसके अनुकूल नहीं था। बेचैन हो गया था। उसको इन्सानों में जीना पड़ रहा था, पर वह भेड़ियों में रहने का आदी हो गया था। इसलिए मर गया।

इन्सान जो कुछ भी बना है शिक्षा से बना है, साधना से बना है, प्रार्थना से बना है। प्रार्थना मनुष्य की ज़िन्दगी में न हो, साधना मनुष्य की ज़िन्दगी में न हो, शिक्षा इसको न मिले, मनुष्य भेड़िया है। अन्य कुछ नहीं पशु है। इस ज्ञान की तीन धारणाएँ हैं। बोलना माँ-बाप से आया है। समाज के कुछ रस्म-रिवाज पिता से मिले हैं। पदार्थों की जानकारी स्कूल से मिली। शिक्षा से मैंने जान तो लिया है यह चीज़ क्या है। पर मैं बदला नहीं हूँ। मैंने चीज़ों को जाना है, मैं उसी तरह दुखी हूँ, बेचैन हूँ, परेशान हूँ।

इस समय बहुत शिक्षा बढ़ गई है और मनोवैज्ञानिक कह रहे हैं कि भारत के जो आदिवासी हैं, वे जितने सुखी हैं, शहर के पढ़े-लिखे इन्सान उतने सुखी नहीं हैं, दुखी हैं। भाव यह बेचारे लंगोटी में रह रहे हैं। छोटी सी झोंपड़ी में रह रहे हैं, पर सुखी हैं। कारण, मैंने शिक्षा प्राप्त तो कर ली है, पर मैं बदला नहीं हूँ। मैंने मैट्रिक पास कर ली स्कूल से परे हूँ तो मैं क्रोधी, हूँ तो मैं लोभी, हूँ तो मैं निंदक, हूँ तां मैं दुष्ट। जितनी शिक्षा बढ़ गई, अहंकार बढ़ता गया। तू क्या जानता है ? मैं ज्यादा जानता हूँ। जितने पढ़े-लिखे की वासना असीम होती है, उतनी आम इन्सानों की नहीं होती। गुस्ताख़ी माफ, शिक्षा से अहंकार बढ़ गया, लोभ बढ़ गया, सीमा से बढ़ी हुई है वासना है तो किसी की इज्जत को खतरा है। सीमा से बढ़ा हुआ लोभ है तो किसी की धन-संपदा को खतरा है। सीमा से बढ़ा हुआ अहंकार है तो किसी की जान को खतरा है तो दुनिया भर में खतरा बढ़ गया है। शिक्षा तो प्राप्त कर ली है पर अंदर अंधेरा है। अहंकार है, लोभ अंधेरा है, सीमा से बढ़ी हुई वासना अंधेरा है।

अंधेरे में फूल और काँटे एक जैसे हो जाते हैं। अंधेरा सभी को बराबर कर देता है या ब्रह्म ज्ञान सब कुछ एक कर देता है

या अंधेरा सब कुछ एक कर देता है। अंधेरे में अंधेरा दिखाई देता है। अंधेरा इतना अहंकारी है, कहता है सिर्फ मुझे देखो और किसी को नहीं। लाख मनुष्य बैठे हों, एक भी दिखाई नहीं देता। बड़ा प्रबल अहंकार हो, मनुष्य कहता है सभी की दृष्टि सिर्फ मुझ पर ही हो।

नवा खंडा विचि जानीऐ ॥ *(जपुजी साहिब)*

नव खण्ड, पृथ्वी मुझे ही जाने, मेरी ही चर्चा करे। शिक्षा कितनी भी बाहर से इकट्ठी कर ले, माँ-बाप से कर ले, समाज से कर ले, पर मन के तल पर अंधेरा हो तो दुख होगा। अंधेरे में भटकना होता है। इतनी शिक्षा के होते हुए भी ठोकरें हैं।

कहते हैं भारत में इतनी पढ़ाई नहीं है। खास कर तमिलनाडू, केरल, बंगाल और पंजाब ज़्यादा पढ़ा-लिखा माना जाता है, शेष राज्यों से। किसी-किसी राज्य की 80 प्रतिशत आबादी अनपढ़ है, पर अमेरिका और यूरोप में सभी ही पढ़े-लिखे हैं। पारिवारिक जीवन भ्रष्ट हो गया है वहाँ। माँ का आदर करना नहीं आया। पिता से संबंध जोड़ना नहीं आया। पति-पत्नी के संबंध बनावटी हैं। अब आप उसको पढ़ा-लिखा कहोगे जिसको माँ से निभानी नहीं आती, पिता से निभानी नहीं आती, भाई से जुड़ना नहीं आता, पत्नी से भी जुड़ना नहीं आता या पति के साथ बैठना नहीं आता। पड़ोसी के साथ भी नहीं बैठ सकते। इसको इन्सान कहोगे कि पशु कहोगे।

आप सुन कर हैरान हो जाएँगे कि यूरोप, अमेरिका और कैनेडा में अकेला इन्सान होगा कार में, साथ कुत्ता होगा, कोई इन्सान नहीं होगा। घर-घर में कुत्ते, बिल्लियाँ पाली जा रही हैं। जितना खर्च एक इन्सान पर होता है, उससे तीन गुणा ज़्यादा खर्च कुत्ते पर हो रहा है। उनका इलाज भी कराएँगे। उनका नहाना धोना भी कराएँगे। उनका हार श्रृंगार भी करेंगे। स्पैशल बाज़ार में कुत्ते बिल्लियों का खाना बिकता है, बड़ा महंगा। इनकी इन्सान से नहीं निभ रही, पर पशुओं से निभ रही है। खैर ! शिक्षा तो बहुत है। बहुत पढ़-लिख गया है इन्सान, पर अंदर अंधेरा दूर नहीं हुआ। इसका यह मतलब नहीं है कि पढ़ाई लिखाई की ज़रूरत नहीं, ज़रूरत है।

बहुत सारे धार्मिक लोग अगर किसी-किसी जगह पर पिछड़ गए हैं तो केवल इसलिए कि उनके पास बैरूनी जानकारी नहीं होती। आम स्नातक आदमी को बहुत अहंकार है कि मैं बहुत कुछ जानता हूँ, यह क्या है धार्मिक ? संसार को समझने के लिए शिक्षा की ज़रूरत है, पर शिक्षा ग्रहण की हुई उसकी सफल है, जिस को यह ख्याल आ जाए कि जानता तो मैं बहुत कुछ हूँ, पर हूँ तो मैं क्लेश से दुखी। मेरी शिक्षा ने मेरी परेशानी को बढ़ाया है, मिटाया नहीं है। शिक्षा ने मेरे दुख क्लेश को नहीं मिटाया। इस तरह के मनुष्य की ज़िन्दगी में साधना शुरु हो जाती है। साधना की शिक्षा नहीं होती। शिक्षा है, मैंने कुछ जानना है, साधना है, मैंने अपने आप को बदलना है। अगर बदलना चाहते हो तो फिर किस तरह बनना चाहते हो। मैं परमात्मा जैसा बनना चाहता हूँ, गुरु जैसा बनना चाहता हूँ। बदलने के लिए शिक्षा नहीं चाहिए, साधना चाहिए, जप चाहिए, अगर शिक्षा मनुष्य के पास न हो, साधना हो तो वह बदल सकता है।

पड़िआ होवै गुनहगारु ता ओमी साधु न मारीऐ ॥

(अंग ४६९)

बनारस में ओमी उसको कहते हैं जो सिर्फ ओ३म्-ओ३म् जप सकता है। न चारों वेद पढ़ सकता है, न शास्त्र पढ़ सकता है, न गीता पढ़ सकता है, न कुरान। बिल्कुल अनपढ़ है, पर अनपढ़ से अनपढ़ इन्सान हो, वाहिगुरु तो कह सकता है, राम तो कह सकता हैं, अल्लाह तो कह सकता है। मैंने सीखना है। बहुत सारी किताबें, कापियाँ और अध्यापकों की ज़रूरत है। बदलना है, एक ही अक्षर काफी है, वाहिगुरु ही काफी है। अगर मैंने संसार में रहना है तो मुझे शिक्षा की ज़रूरत है। शिक्षा से इतना होगा कि इसको जानकारी मिल गई है, समझ मिल गई है। एक अक्षर का जप अपने-आप को बदलने के लिए, जानने के लिए नहीं है। जानने को तो वाहिगुरु जान लिया, बात खत्म। एक अक्षर का पता लग गया, अब इसका जप करना है। एक ही अक्षर की रट। समझदार इन्सान कह देते हैं, क्या ज़रूरत है ? बार-बार कहने की क्या ज़रूरत है ? नहीं,

मैंने बदलना है। मैं जिस तरह हूँ, समाज को तो कबूल हूँ, पर परमात्मा को कबूल नहीं है। साधना कर-कर के एक दिन उस शिखर पर पहुँचता है। किसी की एक दिन में पहुँच हो जाएगी, किसी की एक साल में। हो सकता है किसी को एक जन्म लगे, हो सकता है किसी को कई जन्म लगें। इस नतीजे पर पहुँचेगा कि साधना कर-कर के मैं अपने आप को बदल नहीं सका। साधना यह करता था, शिक्षा यह बाहर करता था, प्रार्थना अंदर निकलेगी। न सीखने की ज़रूरत, न करने की ज़रूरत। वह जो प्रार्थना निकलेगी, सीधी परमात्मा तक पहुँचती है। कभी व्यर्थ नहीं जाती।

बिरथी कदे न होवई जन की अरदासि ॥ *(अंग ८१९)*

पर यह प्रार्थना कब निकलती है ? जब साधना कर-कर मैं थक गया। वाहिगुरु जप-जप कर मैं थक गया। कुछ भी नहीं हुआ। इस का मतलब कि मैं कथा कीर्तन न सुनूँ, मैं वाणी न पढ़ूँ। मैं साधना न करूँ। मैं वाहिगुरु मंत्र न जपूँ। जपना है, बार-बार करना है। तब तक करना है, जिस दिन यह ख्याल आ जाए कि साधना कर रहा हूँ, और मेरे करने से परमात्मा नहीं मिल सकता। अगर मेरे करने से मिल सकता तो मेरा किया हुआ बड़ा है, परमात्मा बड़ा नहीं है। यह ठीक है परमात्मा ने कुछ अपने हाथ में रखा है और कुछ हमारे हाथ में। पर अगर हमारे हाथ में भी कुछ दिया है तो दिया उसने ही है। इसलिए एक ब्रह्मज्ञानी कह देता है कि मेरे पास कुछ नहीं।

प्रभ डोरी हाथि तुमारे ॥ *(अंग ६२६)*

सब कुछ तेरे पास है। वह कहता है अगर मेरे पास कुछ स्वतंत्रता भी है करने की, तो तुम्हारी दी हुई है। मैं कौन से स्थान पर स्वतंत्र हूँ और कौन सी जगह पर नहीं हूँ, कैसे समझूँगा ? जिस चीज को मैं दूसरे से हासिल कर सकता हूँ और दूसरे को दे भी सकता हूँ, समझ लेना वहाँ मैं स्वतंत्र हूँ। मैंने वस्तु किसी से ली है, मैंने वस्तु किसी को दी है इसमें मैं स्वतंत्र हूँ। जो चीज़ मैं किसी से ले नहीं सकता, किसी को दे भी नहीं सकता, वहाँ मैं परतंत्र हूँ। कितनी

भी दया क्यों न पैदा हो नेत्रहीन पर और इन्सान कहे उस नेत्रहीन को कि चलो, तुम्हारी आँखें काम नहीं करती है कोई बात नहीं, मेरी आँखों से देख। नहीं होगा। यह मैं नहीं कर सकता। यहाँ मैं परतंत्र हूँ। चलो, तेरी अक्ल नहीं काम करती न सही, तो मेरी अक्ल से सोच ले। यह मैं नहीं कर सकता अगर कोई समाधिलीन पुरुष है और मैं उसको कहूँ समाधि मुझे दे तो मैं नहीं ले सकता। समाधिलीन पुरुष समाधि दे भी नहीं सकता। अगर समाधि दी जाती तो फिर एक अवतार की ज़रूरत थी, शेष की नहीं। उसने सभी को ही दे देनी थी।

मैंने हाथों, जुबान का कैसे प्रयोग करना है, मेरी स्वतंत्रता है। मैंने पैरों को किस तरफ चलाना है, मेरी स्वतंत्रता है, पर हाथ पैर बनाने में मेरी स्वतंत्रता नहीं है। यह तो प्रभु की देन है। यह नयन नक्श उसी की देन है। यह साँस की हरकत उसी की देन है। अगर कोई कहे मैं समाधि दे सकता हूँ तो यह सबसे बड़ा झूठ है। तू नहीं दे सकता।

सारी दुनिया में धन बढ़ता जा रहा है, मकान बढ़ते जा रहे हैं, पदार्थ बढ़ते जा रहे हैं, पर सारी दुनिया में धर्म घटता जा रहा है। कारण ? पिता करोड़पति है तो बच्चे अपने-आप करोड़पति हैं। जन्म से कोई धनवान हो सकता है, जन्म से कोई धार्मिक नहीं हो सकता। जीवन से धार्मिक होगा। धार्मिक जीवन खड़ा है साधना पर, प्रार्थना पर। क्योंकि शब्द में अरदास है, प्रार्थना है, इसलिए इतनी बात मैं तुम्हारे सामने खोल रहा हूँ कि धर्म शिक्षा पर नहीं खड़ा और धर्म को कोई शिक्षा नहीं दी जा सकती। शिक्षा दी जा सकती है अक्षरों की। बड़ी-बड़ी टकसालें ज्ञानी पैदा कर सकते हैं, भक्त नहीं। कोई टकसाल भक्त को जन्म नहीं देती। टकसाल से शिक्षा मिलेगी, अक्षरों का बोध मिलेगा, व्याकरण का पता चलेगा। ज्ञानी पैदा होंगे। कोई संत नहीं होगा, कोई भक्त नहीं होगा।

पंडित सूर छत्रपति राजा भगत बराबरि अउरु न कोइ ॥

(अंग ८५८)

भक्त की तुलना में ज्ञानी कुछ भी नहीं, दानी कुछ भी नहीं, शूरवीर भी कुछ नहीं। पंडित, विद्वान भक्त के सामने कुछ भी नहीं। चाहे वह भक्त अनपढ़ है। भक्त के सामने यह सभी दो कौड़ी के हैं। भक्ति की शिक्षा नहीं होती। कोई इन्सान अपने अहंकार से, लोभ से, वासना से दुखी हो गया है और अपने आप को बदलना चाहता है, तो ऐसा इन्सान साधना कर सकता है। दूसरा करेगा ही नहीं। कोई मनुष्य अपने अहंकार, लोभ, वासना से मुश्किल नहीं हुआ तो कथा, कीर्तन सुन सकता है, पर साधना नहीं करेगा। अगर कथा कीर्तन सुनते-सुनते साधना करने का ख्याल आ गया है तो सफल है। साधना एक अक्षर की होती है।

एकु अखरु जो गुरमुखि जापै तिस की निरमल सोई ॥

(अंग ७४७)

एक अक्षर का जप अगर आरम्भ हो गया तो साधना शुरु हो गई। पढ़ा लिखा इन्सान बहुत बड़े गुनाह करता है और अनपढ़ इन्सान छोटे-छोटे गुनाह करता है। अनपढ़ है, थोड़ी बहुत किसी की जेब काट ली है। पढ़ा-लिखा है, सारे मुल्क की जेब काट ली। अनपढ़ है तो कोई एक-आध कत्ल किया है छोटी-सी बात पर। पढ़ा-लिखा है, सड़कों पर लाशें ही बिछा दी हैं। दोनों पढ़े-लिखे और मूर्ख न हो। मूर्खता एक अंधेरा है। वाहिगुरु जप व्यक्तिगत है। दूसरा तीसरा पास नहीं चाहिए। दूसरे तीसरे पर ख्याल आएगा।

कथा कीर्तन सामूहिक बंदगी है। मैंने बदलना है। अगर ऐसा करते-करते वह अपने आप को बदल नहीं सका। बड़ा वाहिगुरु जपा इसने, घण्टा-घण्टा, दो-दो घण्टे रोज़ जपता है, कुछ नहीं हुआ और मैं यह भी अर्ज़ कर दूँ कि कुछ भी नहीं होगा। तुम कहोगे कि मैं फिर यह कहता क्यों हूँ ? यह व्यक्तिगत बंदगी है और करनी चाहिए। जैसे मैं कह रहा हूँ कि शिक्षा हासिल करनी चाहिए संसार में विचरने के लिए, पर शिक्षा हासिल की उसकी सफल है जिसको यह ख्याल आ जाए कि जानता तो मैं बहुत कुछ हूँ, पर बदलता तो मैं हूँ नहीं। जैसे मूर्ख है, उसी तरह मैं हूँ। फिर उसको लगेगा कि कुछ नहीं मेरी पढ़ाई-लिखाई। इसने मेरी मूर्खता नहीं मिटाई। मैंने साधना करनी है।

गुर सतिगुर का जो सिखु अखाए
सु भलके उठि हरि नामु धिआवै ।। *(अंग ३०५)*

अब मैंने प्रभातकाल उठना है। अब मैंने जप करना है, अब मैंने बदलना है अपने आप को। क्या यह बदल लेगा। नहीं, नहीं बदल सकता। तुम कहोगे फिर जप क्यों करे? ज़रूरत है। जप करते-करते ख्याल आएगा, हे प्रभु! मैंने जो कुछ करना था, कर लिया है। इससे तो कुछ भी नहीं हुआ। जिसको मैं हासिल कर सकता हूँ, वह संसार है, पदार्थ है। जिसको मैं हासिल नहीं कर सकता, मुझे नहीं मिल सकता, वही परमात्मा है। फिर किस तरह वह प्राप्त होता है? जिस दिन साधना करते-करते इन्सान थक जाता है, और अंदर से प्रार्थना निकलती है, हे प्रभु! मैंने जो कुछ करना था, कर लिया है। तू रहम कर। यह अरदास ज़िन्दगी में एक बार होती है। सारी ज़िन्दगी नहीं होती। क्यों? जिस दिन होती है, उसी दिन पूरी हो जाती है, पर जो साधना नहीं करता, वह इस प्रार्थना तक नहीं पहुँच सकता। इसलिए साधना की ज़रूरत है। साधना मनुष्य को यहाँ पहुँचा दे। यह नहीं कि दो चार दिन वाहिगुरु वाहिगुरु किया और अब प्रार्थना करे। प्रार्थना की नहीं जाती, प्रार्थना होती है। अगर प्रार्थना भी मैंने की तो फिर मैंने क्या किया। मेरे करने से परमात्मा नहीं मिलेगा। मेरे किसी कर्म से नहीं मिलता। मेरे जिस-जिस कर्म से मुझे मिल सकता है, पदार्थ मिलेगा, रुतबा मिलेगा, ओहदा मिलेगा, इज़्ज़त मिल सकती है पर परमात्मा नहीं मिलता।

अहिरख वादु न कीजै रे मन ।।
सुक्रितु करि करि लीजै रे मन ।। *(अंग ४७९)*

बस सुकर्म, ले ले, बहुत कुछ तू भी प्राप्त कर लेगा, उद्यम कर, मेरी मेहनत ने जो कुछ मुझे प्राप्त कराया है, पदार्थ है। मेरी समझदारी ने जो कुछ मुझे प्राप्त कराया है, संसार होगा, निरंकार नहीं है। निरंकार तो उस दिन प्राप्त होता है जिस दिन उसकी रहमत हो जाए। उसकी कृपा उस दिन होती है जिस दिन अंदर से प्रार्थना निकले। प्रार्थना उस दिन निकलती है जिस दिन इन्सान समझ ले

कि सारी की हुई साधना व्यर्थ है। तू रहम कर, इस तरह की जब अंदर से प्रार्थना निकलती है, उस दिन पूरी हो जाती है।

इस शब्द में श्री गुरु अर्जुन देव जी महाराज सब कुछ परमात्मा पर बताते हैं। प्रार्थना में ही परमात्मा प्रकट हो जाता है। शिक्षा व्यर्थ जा सकती है। साधना व्यर्थ जा सकती है, पर प्रार्थना कभी व्यर्थ नहीं जा सकती। मेरी समझदारी व्यर्थ जा सकती है। मैंने 20-25 साल बहुत कुछ किया है, सारा व्यर्थ जा सकता है पर मेरी प्रार्थना नहीं जाएगी, अगर अंदर से पैदा हो। हम जो किसी को कहते हैं कि हमारे लिए अरदास करो। अरदास की नहीं जाती, अरदास होती है। इस पर एक उर्दू का शायर कहता है :

खुदा मंजूर करता है दुआ दिल से होती है।
पर यह एक मुश्किल है यह बड़ी मुश्किल से होती है।

जब दिल से मनुष्य अरदास करता है, सब कुछ परमात्मा पर छोड़ देता है।

किश्ती खुदा पर छोड़ दे, लंगर तो तोड़ दे।
अहसान नाखुदा के उठाए मेरी बला से।

कहते हैं मल्लाह के अहसान कौन उठाए ? नाखुदा कहते हैं मल्लाह को। इस तरह की अरदास इस महाकाव्य में है। आप श्रवण करो। बड़ी इच्छा थी प्रहलाद की जो प्रभु रस मेरे पास है, वह मेरे पिता के पास भी हो। मीरा तड़पती रह गई, हे प्रभु ! इतना रस तूने मुझे दिया है, पर मेरे पति की ज़िन्दगी बिल्कुल बेरस है। उसने घर से निकाल दिया था। श्री गुरु रामदास जी समझाते रह गए बाबा पृथ्वी चंद को :

काहे पूत झगरत हउ संगि बाप ।।
जिन के जणे बडीरे तुम हउ तिन सिउ झगरत पाप ।।

(अंग १२००)

पृथ्वी चंद तो पाप करता था। पहले गुरु रामदास जी से लड़ता रहा। फिर गुरु अर्जुन देव जी से झगड़ता रहा। प्रेरणा दी जा सकती है। अगर तू साधना करने लग पड़े तो तेरी शिक्षा सफल हो गई।

साधना तुझे अरदास तक पहुँचा दे तो फिर ठीक है। इस शब्द में अरदास-मयी बोल हैं। आप श्रवण करो।

बिलावलु महला ५ ॥
जिउ भावै तिउ मोहि प्रतिपाल ॥

हे प्रभु! मैंने तो कर-कर के देख लिया है, अब जैसे तुम्हें भाता है, वैसे तू मेरा पालन कर। मैंने तो अपना पालन कर-कर के देख लिया है। अपनी सूझ समझ से जिस ढंग से जीया, जी कर देख लिया है। अब जैसे तुम्हें भाता है, मैं तुम पर छोड़ देता हूँ। यह डोर अब मैंने तेरे हाथ पकड़ा दी है।

पारब्रहम परमेसर सतिगुर
हम बारिक तुम्ह पिता किरपाल ॥ १ ॥ रहाउ ॥

तू हमारे मन, बुद्धि से परे है। तुम परिपूर्ण परमात्मा हो। हम तेरी संतान हैं। तुझ से बड़े नहीं हो सकते। इसलिए जीने का तरीका नहीं। मैं सफल कैसे हो सकता हूँ? हे प्रभु! यह डोर तेरे हाथ में है। तू रहम कर अपनी संतान पर।

मोहि निरगुण गुणु नाही कोई
पहुचि न साकउ तुम्हरी घाल ॥

वह परिश्रम मैं किस तरह करूँ, जिससे मुझे गुणों की प्राप्ति हो जाए। मैं उस परिश्रम तक नहीं पहुँच सकता। मैं नहीं कर सकता। भाव मैं अपने परिश्रम से तेरे गुण नहीं हासिल कर सकता। तुम समदृष्टि हो। मैं समदृष्टि होना चाहता हूँ। तू प्रेम का सागर है, मैं प्रेम का सागर होना चाहता हूँ। तू महा-ज्ञानवान है, मैं भी अनुभव ज्ञान प्राप्त करना चाहता हूँ। तू निर्भय है, मैं भी निर्भय होना चाहता हूँ, पर मैं अपने परिश्रम से कैसे पहुँचू? हे प्रभु! मैं अपनी पहुँच तेरे तक नहीं ले जा सकता। तू रहम कर, मेरी झोली में गुणों की दात डाल।

तुमरी गति मिति तुम ही जानहु
जीउ पिंडु सभु तुमरो माल ॥ १ ॥

हे परिपूर्ण परमात्मा ! वास्तव में तेरा बड़प्पन कितना है ? तू कहाँ तक फैला हुआ है ? किस ढंग से जी रहा है, यह तू ही जानता है। यह हमारी समझ से दूर की बात है। हम पूर्ण तौर पर नहीं समझ सकते। तू कृपा कर और अपने साथ जोड़।

अंतरजामी पुरख सुआमी
अनबोलत ही जानहु हाल ।।

तू दिलों की जानने वाला है और सबका मालिक है। अब मुझे ज़्यादा बोलने की ज़रूरत नहीं। तू तो बिना बोले ही जानता है। प्रार्थना में शब्द नहीं होते। जिन भावनाओं से भरा हुआ हृदय होता है, कंठ से बोल नहीं निकलेंगे। भावना अंदर से निकलती है। मनुष्य छोड़ देता है परमात्मा पर। वह अरदास विस्तृत भी नहीं होगी। तू अन्तर्यामी है। रहम कर।

तनु मनु सीतलु होइ हमारो
नानक प्रभ जीउ नदरि निहाल ।। २ ।। ५ ।। १२१ ।।

अपनी रहम की दृष्टि कर, कृपा कर ताकि तन और मन शान्त हो, सुकून मिले, आनन्द मिले। दैवी गुण मिलें। तुम अपनी रहम की दृष्टि करो। इस तरह की प्रार्थना हमारे अंदर से पैदा हो ताकि साधना और शिक्षा इसका सही बोध हमें हो सके। भूल चूक की क्षमा।

वाहिगुरु जी का खालसा ।।
वाहिगुरु जी की फतह ।।

मनहु न नामु विसारि

सूही महला १ ॥

मनहु न नामु विसारि अहिनिसि धिआईऐ ॥
जिउ राखहि किरपा धारि तिवै सुखु पाईऐ ॥ १ ॥
मै अंधुले हरि नामु लकुटी टोहणी ॥
रहउ साहिब की टेक न मोहै मोहणी ॥ १ ॥ रहाउ ॥
जह देखउ तह नालि गुरि देखालिआ ॥
अंतरि बाहरि भालि सबदि निहालिआ ॥ २ ॥
सेवी सतिगुर भाइ नामु निरंजना ॥
तुधु भावै तिवै रजाइ भरमु भउ भंजना ॥ ३ ॥
जनमत ही दुखु लागै मरणा आइ कै ॥
जनमु मनणु परवाणु हरि गुण गाइ कै ॥ ४ ॥
हउ नाही तू होवहि तुध ही साजिआ ॥
आपे थापि उथापि सबदि निवाजिआ ॥ ५ ॥
देही भसम रुलाइ न जापी कह गइआ ॥
आपे रहिआ समाइ सो विसमादु भइआ ॥ ६ ॥
तूं नाही प्रभ दूरि जाणहि सभ तू है ॥
गुरमुखि वेखि हदूरि अंतरि भी तू है ॥ ७ ॥
मै दीजै नाम निवासु अंतरि सांति होइ ॥
गुण गावै नानक दासु सतिगुरु मति देइ ॥ ८ ॥ ३ ॥ ५ ॥

(अंग ७५२-५३)

सम्मानयोग्य गुरु रूप साध संगत जी ! विनम्रता सहित नमस्कार स्वीकार करना ।

वाहिगुरु जी का खालसा ॥ वाहिगुरु जी की फतह ॥

मै अंधुले हरि नामु लकुटी टोहणी ॥

सूही राग का पावन पवित्र वाक्य श्री गुरु नानक देव जी महाराज का है। हे प्रभु ! तेरा नाम अंधे की लाठी है। ब्रह्माण्ड में जितना जीवन है, इसको नेत्रवान और अंधेपन में बाँटा जाए तो यह बाँट इस तरीके से बनती है। पत्थर बाहर से भी अंधा, कुछ नहीं दिखाई देता। अंदर से भी अंधा, कुछ दिखाई नहीं देता। वनस्पति बाहर से भी अंधी है, अंदर से भी अंधी है। कितने पक्षी वृक्ष पर आ कर बैठे हैं, कुछ पता नहीं, कुछ भी नहीं पता और अंदर के अस्तित्व का भी कोई ज्ञान नहीं। पशुओं का संसार, पक्षियों का संसार अंदर तो अंधे हैं पर बाहर से नेत्रवान हैं। पशुओं को बाहर से दिख जाता है कि पहाड़ है, यह आग है, यह दरिया है, यह पानी है। यह हमारा खाना है, दिख पड़ता है पर अंदर से अंधे हैं। कोई सूझ नहीं, कोई समझ नहीं। बाहर से नेत्रवान हैं कीड़े-मकौड़े। साँप के पास भी आँखें हैं, उस दृष्टि से अपना खाना ढूँढ लेता है। उस दृष्टि से ही वह अपनी बिल ढूँढ लेता है। दृष्टि है। साँप भी बाहर से नेत्रवान हैं, अंदर से अंधे हैं।

यह जो मनुष्य जगत् है, यह इन तीन हिस्सों में बाँटा जाता है। मनुष्य दुनिया में अंदर से भी अंधे हैं, बाहर से भी अंधे हैं। जैसे धृतराष्ट्र राजा अंधा था। अंदर से भी अंधा है। भरी महफिल के बीच द्रौपदी को नग्न किया जा रहा है। द्रौपदी आखिर उसकी बहू है। उसके भतीजे की पत्नी है। पुत्र की पत्नी, भतीजे की पत्नी वह तो पुत्री है और उसकी महफिल में द्रौपदी को नग्न किया जा रहा है। बाहर से अंधा है, अंदर से भी अंधा है। उसको यह महसूस नहीं हो रहा कि द्रौपदी मेरी बेटी है। कुछ मैं बोलूँ, कुछ मैं दुर्योधन को रोकूँ, कुछ मैं करूँ। अंदर से भी अंधा है।

कुछ ऐसे हैं जो अंदर से नेत्रवान हैं, बाहर से अंधे हैं। जैसे सूरदास बाहर से अंधा है, कुछ दिखाई नहीं देता। आगे दरिया है, पत्थर है, पहाड़ है, कुछ भी दिखाई नहीं देता है, परमात्मा दिखाई देता है। कोई उसकी बाँह पकड़े तो कहता है कि परमात्मा है। पत्थर से ठोकर लग गई है तो कहता है हे प्रभु ! आज तुम्हारे साथ टकरा गया हूँ। आग के पास बैठता है तो कहता है, हे प्रभु ! आज

तपिश मिली है, आँच मिली है। फूलों के पास बैठता है तो कहता हैं कि तू बड़ा सुगन्धित है। बहुत महक आई है तुम से।

एक तीसरी दुनिया है। जैसे बाहर भी नेत्रवान हैं, अंदर से भी नेत्रवान हैं। जैसे भक्त कबीर को ले लो, नामदेव को ले लो, बाबा फरीद को ले लो, भक्त जयदेव को ले लो। इनको बाहर से भी दिखाई देता है, अंदर से भी सही दिखाई देता है। यह बाहर से अंदर से नेत्रवान हैं। दूसरा वर्ग है जो बाहर से अंधा है, पर अंदर से नेत्रवान है। इस तरीके से मनुष्यों को हम तीन हिस्सों में बाँट सकते हैं। चाहे मेरी उस समय उम्र छोटी थी। देश के बंटवारे से पहले की बात करूँ। संत भगत सिंघ जी जिला बन्नो में हुए हैं। सन् 1944 में गुज़र गए। नेत्रहीन थे। उनकी याद में फरीदाबाद की संगत ने फरीदाबाद में बहुत बड़ा स्थान बनाया है। गुरुद्वारा संत भगत सिंघ। बन्नो शहर के सभी गुरुद्वारों को मस्जिदों या स्कूलों में बदल दिया गया, पर संत भगत सिंघ का स्थान नहीं बदला। दर्द-ए-दिल मुसलमान कहते हैं वह फकीर की जगह है। वह खुदा से जुड़ी हुई आत्मा थी। इतना मुझे याद है कि जिला बन्नो वासियों को, (दास उस इलाके में आया सन् 1944 में) कहने लगे कि मैं एक विनती करता हूँ बन्नो की संगत को कि आप रावी से पार चले जाओ। अभी ही चले जाओ। अभी ही इन्तज़ाम कर लो। अपनी ज़मीन जायदाद बेच लो। अच्छा पैसे मिल जाएँगे और इज़्ज़त आबरू से चले जाओ। 90 फीसदी संगत ने सोचा कि बाबा जी बूढ़े हो गए हैं। संत जी बूढ़े हो गए हैं। बुद्धि भ्रष्ट हो गई है 90 फीसदी। पहले तो कभी इस तरह नहीं कहते थे। अब बूढ़े हो गए हैं, इस तरह की बातें करते हैं। यह एक बार नहीं, तीन बार कहा और जब यह बोल बोले, उससे महीने डेढ महीने बाद उन्होंने अपनी देह छोड़ दी। चले गए।

सन् 1946 में आग लगनी शुरु हो गई। मारपीट शुरु हो गई। 1947 में पूरी बर्बादी के रूप में प्रकट हुई। 90 फीसदी दुनिया अपनी इज़्ज़त भी गँवा बैठी। बहू-बेटियाँ भी गँवा बैठी, धन-संपदा भी गँवा बैठी, जिंद जान भी गँवा बैठी। जो रावी से पार आए,

10 फीसदी बच गए। यह कह सकते हैं कि नेत्रहीन थे। बाहर से अंधे थे पर संत भगत सिंघ को अंदर से सब कुछ दिखाई देता था। भक्त सूरदास ने इतना बड़ा एक ग्रंथ लिखा। उसको सुर सागर कहते हैं और उसकी एक पंक्ति सारंग राग में श्री गुरु ग्रंथ साहिब जी महाराज के अंदर हैं। जिन्होंने क्रमवार पाठ किया होगा गुरु ग्रंथ साहिब जी महाराज का, उनको पता होगा। शीर्षक यह है :

सारंग महला ५ सूरदास ॥

इस शीर्षक के ऊपर पंक्ति है :

छाडि मन हरि बिमुखन को संगु ॥ *(अंग १२५३)*

एक ही पंक्ति है। इस शब्द की बाकी पंक्तियाँ भाई बन्नो जी की बीड़ में मिलती हैं, जिसको खारी बीड़ कहते हैं। भाई बन्नो साहिब ने जो अनुकरण किया था। जिस दिन मथुरा से, वृंदावन से भटका हुआ यह गुरु अर्जुन देव जी के दरबार में पहुँचा। मैं इसलिए कहता हूँ कि कई जगह से बेचारे ने ठोकरें खाईं, क्योंकि आँखें नहीं थी। बाहर से दिखाई नहीं देता। उस ज़माने में पहुँचा, जब भाई गुरदास जी लिख रहे थे और गुरु अर्जुन देव जी लिखवा रहे थे। श्री गुरु ग्रंथ साहिब जी महाराज का संपादन हो रहा था। यह उस वक्त पहुँचे थे। आदर भी किया हो और वहाँ सतिगुरु की हाजिरी में यह बोल सुनाया। गाकर सुनाया है, क्योंकि संगीतकार भी थे। इनके गीत संगीत दोनों रूपों में परमात्मा बसा हुआ था। सारंग राग का अलाप किया और यह सारंग अब लगभग 10-11 बजेंगे तो भोग पड़ेगा। लगता है अब यही समय होगा। दिन का वक्त होगा। दिन का राग है। अलापा, बहुत मीठा राग है। बहुत प्यारा राग है। अलाप किया है और यह पंक्ति गायन की :

छाडि मन हरि बिमुखन को संगु ॥

सुरति जुड़ गई, ऐसे जुड़ी कि अंतर्ध्यान हो गए। काफी लंबे समय तक गुरु अर्जुन देव जी इन्तज़ार करते रहे कि कुछ और कहे, कुछ और बोले, पर जिसने बोलना था, वह तो अबोल में लीन हो

गया। उसकी सुरति जुड़ गई। जिसने बोलना था वह तो चुप कर गया। अब कौन बोले ? मन ही चुप कर जाए तो जुबान क्या बोले ? जुड़ गया। फिर काफी समय इंतज़ार करने के बाद उत्थान नहीं हुए तो श्री गुरु अर्जुन देव जी की कृपा हुई, रहमत हुई। भाई गुरदास को कहने लगे कि इस भक्त की पंक्ति में बहुत जान है, क्योंकि निकली जो आत्मा में से है। रूहानियत में से निकली है। एक पंक्ति लिख लो। हुक्म मान कर लिख दी है भाई गुरदास जी ने :

छाडि मन हरि बिमुखन को संगु ।।

पर विनती की, "महाराज ! यह कैसे पता चलेगा कि सूरदास की पंक्ति है, किस तरह पता चलेगा ?" साहिब कहते हैं कि बाकी शब्द हम पूरा कर देंगे। कमाल की बात, किसी को पगड़ी का सिरोपा मिलता है, किसी को धन का, किसी को और साज-सामान का, यह ऐसा भक्त है, गुरदेव ने शब्द का सिरोपा दिया। शब्द उच्चारण किया सूरदास के नाम पर, अपना नाम नहीं। शब्द की आखिरी पंक्तियों में सूरदास है, पर शब्द तो गुरु अर्जुन देव जी का है। इसलिए कहीं आम संगतों को भ्रम न हो कि सारा शब्द सूरदास का है, ऊपर लिख दिया सारंग महला ५ ।। सूरदास ।। पर यह शब्द हमने सूरदास के नाम से उच्चारण करना है। सूरदास का ही समझा जाए। शब्द गुरु अर्जुन देव जी का है, नानक शब्द हटा कर सूरदास को आगे करना है। इतनी कृपा हुई सूरदास पर। उस शब्द में सतिगुरु ऐसे कहते हैं :

हरि के संग बसे हरि लोक ।। *(अंग १२५३)*

यह जो हरि के भक्त हैं, यह जो हरि के जन हैं, बस हर वक्त हरि के बीच ही रहते हैं। यह जीते हरि के बीच ही हैं। यह खाते पीते हरि के बीच ही हैं। चलते-फिरते हरि के बीच ही हैं।

हरि के संग बसे हरि लोक ।।
तनु मनु अरपि सरबसु सभु अरपिओ
अनद सहज धुनि झोक ।। १ ।। रहाउ ।। *(अंग १२५३)*

तन भी अर्पण कर दिया। मन भी अर्पण कर दिया। लीन, आठ पहर लीन। जिनको समझ भी आ गई है। क्या ?

सिआम सुंदर तजि आन जु चाहत जिउ कुसटी तनि जोक ।।

(अंग १२५३)

भक्त सूरदास जी के इष्ट थे श्री कृष्ण। किसी का सहारा पकड़ना ही पड़ता है। इष्ट थे श्री कृष्ण जिसका सहारा पकड़ कर वह परिपूर्ण परमात्मा से जुड़ गए थे। सूरदास को इस बात की समझ आ गई है कि उस साँवले सुन्दर परमात्मा के बिना किसी और की चाहत रखनी और उस चाहत में जीना और उसकी प्राप्ति में रस लेना ऐसे है जैसे कुष्ठी का खून जोंक चाव से पीती है। कहते हैं जोंक आम खून से कुष्ठी का खून बड़े चाव से पीती है। कारण, कुष्ठी का खून कहते हैं मीठा होता है। उस में मिठास ज्यादा होती है। कुष्ठी के खून में मवाद ज्यादा होता है और मवाद में मिठास ज्यादा होती है, पर कुष्ठी के खून में ज़हर होता है। बाद में जोंक तड़प-तड़प कर मर जाती है।

अब तो यह इलाज नहीं रहा, पर मैंने अपनी आँखों से देखा है देश के बँटवारे से पहले जिनके घुटनों में सूजन आ जाती थी, खून खराब हो जाता था, उनको जोंक से ठीक किया जाता था। जोंक लगा कर इलाज करते थे। जोंक गंदा खून पी लेती थी। कुष्ठी का इलाज भी जोंक लगा कर किया जाता था। जोंक का मालिक जोंक का काम करते था। अगर कुष्ठी को लगाना है तो चार गुणा बढ़ा कर पैसे माँगते थे क्योंकि जोंक मर जाती थी, बचती नहीं थी।

संसार के विकारों में रस तो बहुत है, मिठास तो बहुत है, पर ज़हरीले हैं। आध्यात्मिक मौत हो जाती है। दैवी गुण मर जाते हैं। यह सूरदास को समझ आ गई। जो शरीर से परे का, इन्द्रियों से परे का रस है, आनन्द है, वह परलोक सूरदास को प्राप्त है। यह जीवन मुक्त है। यह शब्द तो गुरु अर्जुन देव जी का है। धृतराष्ट्र जैसे दुनिया में करोड़ों अंधे हो सकते हैं। भाई का कत्ल किया, नहीं दिखाई देता, भाई बाहर भी अंधा है। अंदर से तो अंधा है

ही। माँ-बाप को धोखा दिया। माँ माँ नहीं दिखाई देती। पिता पिता नहीं दिखाई देता। बहन से धोखा किया है। भाई के साथ धोखा किया है। मित्र से धोखा किया है। इस तरह के अंदर बाहर से अंधे तुम्हें बहुत मिलेंगे। महाभारत में एक ही धृतराष्ट्र हुआ है। इतिहास में तो एक ही राजा मिलता है, और कहानी भी प्रचलित हो गई। अंधा राजा चौपट नगरी। पर नाराज़ न होना, हर शहर अंधे राजाओं से भरा पड़ा है। कईयों का परिवार चौपट हुआ है। घर बार चौपट हो गया है और कई बार तो घर-घर धृतराष्ट्र मिल जाएँगे। इसलिए घर-घर महाभारत बना हुआ है। कलह का अखाड़ा बना हुआ है, बहुत सुन्दर शब्द है सतिगुरु का :

अंधी कंमी अंधु मनु मनि अंधै तनु अंधु ॥
चिकड़ि लाइऐ किआ थीऐ जां तुटै पथर बंधु ॥

(अंग १२८७)

मैं बहुत हैरान होता हूँ। ऐसी-ऐसी कहानियाँ सुनाई जाती हैं और बड़े-बड़े वे संत महात्मा कहे जाते हैं जिनका सच्चाई से दूर का भी कोई संबंध नहीं। और लोग जब झूम-झूम कर सुनते हैं तो मुझे ख्याल आ जाता है कि स्रोत अंधी है, दृष्टि अंधी है। सच दिखाई नहीं देता। सच सुनाई नहीं दे रहा।

अंधी कंमी अंधु मनु मनि अंधै तनु अंधु ॥
चिकड़ि लाइऐ किआ थीऐ जां तुटै पथर बंधु ॥

गुरु अर्जुन देव जी महाराज कहते हैं कि कीचड़ लगाए बाढ़ पर। बाढ़ आई हुई है दरिया में और तू चाहता है कि मुट्ठी भर रेत से रुक जाए। थोड़े से कीचड़ से रुक जाए और मैं तबाह होने से बच जाऊँ। और मुट्ठी भर रेत से विकारों की बाढ़ को रोकना क्या है ? कभी संक्रांति वाले दिन गुरुद्वारे आ गया। कभी पूर्णमाशी वाले दिन गुरुद्वारे आ गया। कभी महीने में एक बार जपुजी साहिब पढ़ लिया। कभी महीने-दो महीने बाद सेवा कर दी, दान-पुण्य कर दिया। यह मुट्ठी भर रेत से इस विकारों के दरिया को रोकना चाहता है। साहिब कहते हैं कि मैं तो देखता हूँ कि पत्थरों के

बाँध टूट गए हैं। जिन्होंने मजबूत बाँध बनाए थे, वे भी टूट गए हैं। शिवजी जैसे, गोरख जैसे, ऋषि विश्वामित्र जैसे। विकारों को रोकने के लिए मजबूत जिन्होंने बाँध बनाए। विकारों को रोकने के लिए पत्थरों के बाँध भी टूट गए। क्योंकि रहाउ की पंक्ति है, इसलिए मुझे खुलासा करने के लिए मजबूर होना पड़ा। पंक्ति है :

मै अंधुले हरि नामु लकुटी टोहणी ॥

आकार भी नहीं दिखाई देता, निरंकार भी नहीं दिखाई देता। पदार्थ भी नहीं दिखाई देते, परमात्मा भी नहीं दिखाई देता। स्वरूप भी नहीं दिखाई देता। अरूप भी नहीं दिखाई देता। एक तो यह तरीका है। दूसरा तरीका जो सब से ज्यादा है, यह जो वासना करके सोचेगा, वह सोच अंधी है। क्या औरंगज़ेब को अंदर से नेत्रवान कहोगे ? तीन भाईयों को कत्ल कर दिया। पिता को जेल में डाल दिया। क्या हिरण्यकशिपु को अंदर से नेत्रवान कहोगे ? अपने पुत्र प्रहलाद को जेल में डाल दिया। भूखा प्यासा पड़ा मरता है। यह बाहर से तो नेत्रवान है पर अंदर से अंधा है। बस इस तरह के लोगों से संसार भरा पड़ा है।

महात्मा बुद्ध क्या कहते हैं कि हमें प्यास लग सकती है, लगी नहीं। यह प्यास से मर रहा था। वह जो मैं राजपाट छोड़ कर आया हूँ, उसके छोड़ने का कभी मुझे इतना दुख नहीं मिला, जितना इस पानी को छोड़ने का सुख मिला है। इसको छोड़ कर जो सुख मिला है, खुशी मिली है, बहुत तृप्ति मिली है। प्यासा पौधा तड़प रहा था, मर रहा था, यह पानी डाल दिया। इसको सुख मिल गया, इसको आराम मिल गया। जो अब इस पौधे का वनस्पति का दुख नहीं देख सकता, लोगों का दुख क्या देख सकेगा। जो किसी का दुख नहीं देख सकता, वह किसी को क्या दुख देगा। किसी का सुख इस बात में है कि दूसरों को सुख ही देना है। पर किसी का सुख इस बात में है कि किसी से सुख लेना। दुख देकर सुख लेना, छीन कर सुख लेना। महाराज कहते हैं कि अंधे की यह पहचान है। अगर मन अंधा है तो तन के तल पर सारी क्रिया अंधी

है। दृष्टि अंधी है, स्रोत अंधी है, व्यक्तित्व अंधा है। भक्त कबीर कहते हैं :

मन रे संसारु अंध गहेरा ॥ *(अंग ६५४)*

सारा संसार अंधकार में है।, अंधेरे में है। अज्ञानता में है, नासमझी में है। इन श्रेणियों में हम किस स्थान पर बैठते हैं। यह अपना फैसला आप करना है। शेख सायदी का बोल मैं तुम्हारे सामने रखूँ। वह कहता है कि अपना फैसला आप कर, दूसरे से न करा। तू गुरमुख है कि नहीं, दूसरे से न कहला। तू दानी है कि नहीं, यह फैसला दूसरों से न ले। हिम्मत आ गई। कुछ न कुछ इसकी आँखें खुलीं। नहीं, कोई मनुष्य फैसला आप नहीं करता। दूसरे ने जो कुछ कह दिया, मान लेता है। दूसरों पर खड़ा है, दूसरों के फैसलों पर इसकी ज़िन्दगी खड़ी है। अपना मुनसफ आप बन। श्री गुरु नानक देव जी महाराज इस पावन पवित्र शब्द के द्वारा हमारे सामने जो विचार रखते हैं, वह यह है, कि अगर सच में ही सारा संसार अंधा है :

मन रे संसारु अंध गहेरा ॥

तो इस अंधे के लिए कोई आशा नहीं है। फिर अंधा क्या करे ? कोई आशा नहीं। जीवन का कोई साधन नहीं। इसको रास्ता नहीं मिल सकता। यह मंज़िल-ए-मकसूद पर नहीं पहुँच सकता। अंधे ही ज़िन्दगी व्यतीत होगी। नहीं, गुरु में यह खूबी है कि जब भी किसी की कमज़ोरी का ज़िक्र करना होता है तो अपने आप को आगे कर लेते हैं। जब गुणों का ज़िक्र करना होता है तो दूसरों को आगे कर देते हैं। यह खूबी है। शेख सायदी सूफी ने कहीं गुरु नानक से पूछा—कौन हो आप तो साहिब क्या कहते हैं :

माणस मूरति नानकु नामु ॥ करणी कुता दरि फुरमानु ॥
(अंग ३५०)

अत्यंत नम्रता, अत्यंत गरीबी :

कहु नानक हम नीच करंमा ॥ *(रहरासि साहिब)*

गुणों का ज़िक्र करना, अन्यों को आगे करना। इन नीचों की गिनती करते-करते सतिगुरु कहते हैं :

नानकु नीचु कहै वीचारु ॥ वारिआ न जावा एक वार ॥
जो तुधु भावै साई भली कार ॥ तू सदा सलामति निरंकार ॥

(जपुजी साहिब)

उनकी पंक्ति में आप खड़े हो गए। यह अकेले क्यों रहें, नानक तो इनके साथ है। सहारा बन गए। मूर्खों का सहारा बन गए गुरु नानक़। घृणा से नहीं देखते। नफरत से नहीं देखते। सीने से लगाते हैं। चलता हुआ मनुष्य कहीं सड़क पर गिर गया तो बहुत लोग उसको उठाने के लिए भाग गए हमदर्दी के नाते। बेचारा गिर पड़ा है। चोट लग गई है। पाप क्या है, चोरी क्या है, मन से गिरना यह मन का अंधा है। जो तन से चोट खाकर गिर गया है, उसको उठाते हो। जो मन से चोट खाकर गिर गया है, उसकी मदद करो। पता है मदद क्यों नहीं होती, क्योंकि आप भी गिरे हुए हैं। अब गिरे हुए गिरे हुए की मदद किस तरह करें। इतनी बात है। इस कारण, अगर आप गिरे हुए न हो तो किसी पापी पर भी तरस आएगा, अकारण नहीं। तो सभी अंधों का सहारा है गुरु नानक और इलाज बताते हैं :

मै अंधुले हरि नामु लकुटी टोहणी ॥

हे प्रभु! हे हरि! जो तेरा नाम है, यह मुझ अंधे की लाठी. है, जिसके साथ मैं ढूँढ सकता हूँ। नहीं कुछ आता। हर तरह के अवगुण हैं। ऐ पुरुष! प्रातःकाल उठ कर वाहिगुरु जप, यह तेरी लाठी बन जाएगा। इस ने कुछ रास्ता दिखा देना है, खोल देना है। कुछ कपाट खोल देगा। कुछ मार्ग बना देगा। साहिब कहते हैं :

मै अंधुले हरि नामु लकुटी टोहणी ॥
रहउ साहिब की टेक न मोहै मोहणी ॥ १ ॥ रहाउ ॥

हे परिपूर्ण परमात्मा! हर वक्त तेरा आसरा है। तेरे आधार पर, तेरे आसरे पर रहता हूँ। इस ढंग से अगर कोई कहे तो यह मोहिनी नहीं मोहती। एक पर मोहन है, एक पर मोहिनी है। एक परमात्मा

है, एक माया है। इसको गुरु नानक देव जी ऐसे कहते हैं–एक शाह है, एक शाहनी है। परमात्मा शाह है। माया शाहनी है। अब साहिब कहते हैं :

साहनि सतु करै जीउ अपनै ॥ *(अंग ३२८)*

जो अपने दिल में शाहनी को सत करके माने कि बस जो कुछ है शाहनी है, शाह कुछ नहीं। **साहनि सतु करै** मिलना तो सत को था, शाह को था, अब शाहनी शाह बनी हुई है। इस तरह प्रभु की टेक पकड़ कर, प्रभु का आधार पकड़ कर, प्रभु का जप करता है। एक दिन शाहनी मोहित नहीं करती। यह मोहनी उस तरफ से अनर्थ नहीं करती। फिर इसको रोकती नहीं। फिर यह शाहनी उसकी सेवादार बन कर शाह तक पहुँचा देती है।

सूही महला १॥ मनहु न नामु विसारि अहिनिसि धिआईऐ॥

दिन रात मन के तल पर प्रभु का नाम भुलाने की कोशिश न कर। बस यही अंधे की लकड़ी है। इसके साथ तुम्हें रास्ता मिल जाएगा।

जिउ राखहि किरपा धारि तिवै सुखु पाईऐ॥ १ ॥

हे परिपूर्ण परमात्मा ! जैसे तेरी रज़ा है, जैसे तेरा हुक्म है, जैसे तेरी इच्छा है, उसमें रहने की तौफीक, क्योंकि इसमें ही सुख है। इसमें ही सुख की प्राप्ति होती है।

मै अंधुले हरि नामु लकुटी टोहणी ॥

मुझ अंधे के लिए तेरा नाम ही सहारा है। लाठी है, लकड़ी है, जिससे सही रास्ता मिल जाता है। रास्ते का पता चल जाता है।

रहउ साहिब की टेक न मोहै मोहणी ॥ १ ॥ रहाउ ॥

उसकी टेक रखकर उसके नाम की लाठी के सहारे चल पड़ता है। यह मोहिनी उसका रास्ता नहीं रोकती। फिर यह शाहनी उसका रास्ता नहीं रोकती क्योंकि उसको पकड़ कर शाह तक पहुँचा देती है। फिर इतनी बात याद रख लेना, वाहिगुरु–वाहिगुरु जपते ही कपाट

खुलेंगे। यह जो वाहिगुरु–वाहिगुरु की साधना कर रहा है, वैसे अनपढ़ है। संसार को ज़्यादा नहीं जानता, पर जप इसलिए रास्ता बनाएगा। अगर अंदर वाली आँखें इसने खोल दी तो बहुत कुछ पता चल जाएगा जो आम लोगों को नहीं पता।

जह देखउ तह नालि गुरि देखालिआ ॥

गुरु के शब्द ने, गुरु के जाप ने ऐसी रहमत की है, अब जिधर मैं देखता हूँ, परमात्मा अंग संग दिखाई देता है। साथ दिखाई देता है।

अंतरि बाहरि भालि सबदि निहालिआ ॥ २ ॥

शब्द के आधार पर जैसे अंदर देखा, तलाश की तो बाहर से दिखने लग पड़ा। वह तो है पर मैं ही अंधा था। उसके नाम की लाठी पकड़ी, ऐसी लाठी पकड़ी कि नेत्रवान हो गए। अब जिधर देखते हैं, वही साथ है। पर यह तलाश अंदर से हुई है। जैसे अंदर से मिला है, बाहर से सारा ब्रह्माण्ड उसका ही रूप दिखा।

सेवी सतिगुर भाइ नामु निरंजना ॥

वह जो परिपूर्ण परमात्मा अंजन से रहित निर्लिप्त है। सतिगुरु के हुक्म, सतिगुरु की रज़ा में रह कर उसका जप किया है, उसकी साधना आरम्भ की है।

तुधु भावै तिवै रजाइ भरमु भउ भंजना ॥ ३ ॥

हे परिपूर्ण परमात्मा! अब जीवन का ढंग यह बन गया है। जैसे तेरी रज़ा है, हम उसमें ही खुश हैं। इस ढंग से सारा भय नष्ट हो गया है। तू भय भंजन है। भय को नाश करने वाला है।

जनमत ही दुखु लागै मरणा आइ कै ॥

मनुष्य बच्चे का जन्म हुआ है, पर एक रूहानी जन्म उसके पास नहीं है। मरना तो जन्म के साथ चल रहा है। इसके पास रूहानी ज़िन्दगी नहीं है। इसके पास आध्यात्मिक आनन्द नहीं है। जन्म लेते ही मौत है। अगर मरकर भी वह जीवन न पैदा हुआ और वह जीवन पैदा होगा।

आखा जीवा विसरै मरि जाउ ॥ *(रहरासि साहिब)*

अगर जीवन भर कहा ही नहीं तो ऐसे समझ लो मुर्दा जन्मा था, मुर्दा ही मर गया।

जनमत ही दुखु लागै मरणा आइ कै ॥

जन्म से ही मरने का दुख होता है। रूहानी ज़िन्दगी कोई नहीं। पर :

जनमु मनणु परवाणु हरि गुण गाइ कै ॥ ४ ॥

अगर हरि के गुण गाना आरम्भ हो गया। जन्म कबूल हो गया। मरना भी कबूल हो गया तो जन्म सफल हो गया, मरना भी सफल हो गया।

हउ नाही तू होवहि तुध ही साजिआ ॥

जप जप कर समझ आ जाती है कि तूने ही रचना की है। तूने ही नवाजा है। मैं कुछ भी नहीं हूँ। सब कुछ तू ही तू है। यह समझ आ जाती है जप करने वाले को।

आपे थापि उथापि सबदि निवाजिआ ॥ ५ ॥

आप ही तूने शब्द के जप द्वारा नवाजा है कईयों को और तेरी शक्ति के साथ ही संसार में बनता मिटता है, उत्पति होती है, प्रलय होती है। तेरी शक्ति साथ होती है, तेरी रज़ा साथ होती है।

देही भसम रुलाइ न जापी कह गइआ ॥

देह को भस्म करके यह जीवात्मा पता नहीं कहाँ चली गई है, कुछ भी पता नहीं। आने वालों का पता नहीं चलता कि यह आत्मा कहाँ चली गई है। यह जीव कहाँ चला जाता है, देह को भस्म करके, देह को खाक करके।

आपे रहिआ समाइ सो विसमादु भइआ ॥ ६ ॥

पर जप से यह पता चल जाता है कि सब कुछ के बीच आप ही रमा हुआ है। ऐसा चमत्कार जब दिखाई देता है तो आदमी विस्माद हो जाता है। यह अपने आप है। यह सारा खेल, यह सारा चमत्कार इसमें वह आप ही है तो देखने वाला विस्माद हो जाता है।

तूं नाही प्रभ दूरि जाणहि सभ तू है ॥

परिपूर्ण परमात्मा दूर नहीं है। सब कुछ जानता है। सब कुछ देखता है। बिल्कुल मेरे साथ है, तेरे से कोई दूर नहीं है।

गुरमुखि वेखि हदूरि अंतरि भी तूहै ॥७॥

गुरमुख बन कर उनको प्रत्यक्ष देखा जा सकता है और यह भी देखा जा सकता है कि अंदर भी वही बसा हुआ है और बाहर भी वही बसा हुआ है।

मै दीजै नाम निवासु अंतरि सांति होइ ॥

हे परिपूर्ण परमात्मा ! तेरे चरणों में अरदास है कि नाम में मेरा वास प्रदान कर। हर वक्त तेरा नाम मैं जपता रहूँ। ऐसी रहमत कर। ऐसी कृपा कर।

गुण गावै नानक दासु सतिगुरु मति देइ ॥८॥३॥५॥

हे सतिगुरु ! ऐसी मति दे, यह दास नानक हर वक्त परमात्मा के गुण गाता रहे। उसके गुण उच्चारण करता रहे। उसके नाम का जप करता रहे। भक्त कबीर कहते हैं :

दुइ दुइ लोचन पेखा ॥ हउ हरि बिनु अउरु न देखा ॥

(अंग ६५५)

मन से तो उसको देखता हूँ और मैं दो आँखों से भी देखता हूँ। अंदर से भी नेत्रवान हैं, बाहर से भी नेत्रवान हैं।

साहिब रहमत कर, परिपूर्ण परमात्मा कृपा कर, अंदर की सूझ भी दे, बाहर की सूझ भी दे। बाहर भी सही दिखाई दे, अंदर भी सही समझ आए। ऐसी सतिगुरु कृपा कर। भूल चूक की क्षमा।

वाहिगुरु जी का खालसा ॥
वाहिगुरु जी की फतह ॥

अति ऊचा ता का दरबारा

वडहंसु महला ५ घरु १ १ओं सतिगुर प्रसादि ॥

अति ऊचा ता का दरबारा ॥
अंतु नाही किछु पारावारा ॥
कोटि कोटि कोटि लख धावै ॥
इकु तिलु ता का महलु न पावै ॥ १ ॥
सुहावी कउणु सु वेला जितु प्रभ मेला ॥ १ ॥ रहाउ ॥
लाख भगत जा कउ आराधहि ॥
लाख तपीसर तपु ही साधहि ॥
लाख जोगीसर करते जोगा ॥
लाख भोगीसर भोगहि भोगा ॥ २ ॥
घटि घटि वसहि जाणहि थोरा ॥
है कोई साजणु परदा तोरा ॥
करउ जतन जे होइ मिहरवाना ॥
ता कउ देई जीउ कुरबाना ॥ ३ ॥
फिरत फिरत संतन पहि आइआ ॥
दूख भ्रमु हमारा सगल मिटाइआ ॥
महलि बुलाइआ प्रभ अंम्रितु भूंचा ॥
कहु नानक प्रभु मेरा ऊचा ॥ ४ ॥ १ ॥

(अंग ५६२)

सम्मानयोग्य गुरु रूप साध संगत जी !

वाहिगुरु जी का खालसा ॥ वाहिगुरु जी की फतह ॥

ब्रह्माण्ड में मनुष्य ऐसा प्राणी है, जो शारीरिक भूख के साथ बौद्धिक भूख रखता है। जो खाने-पीने की भूख के साथ जानने की भूख रखता है। पेट भर गया है, तन पर सुन्दर वस्त्र मिल गए

हैं, रहने को सुन्दर मकान मिल गया है, परिवार मिल गया, पर मनुष्य के अंदर जानने की भूख है कि यह चीज़ क्यों है ? कहाँ से है ? कब है ? और कब तक है ? यह चीज़ क्या है ? यह जानने की भूख है। इस भूख ने बड़े-बड़े दार्शनिक, बड़े-बड़े फिलास्फर, बड़े-बड़े चिंतक और बड़े-बड़े खोजी मनुष्य पैदा किए। जानने की भूख हर एक के अंदर है। एक बच्चा जो थोड़ा बोलने और समझने लगता है, उसके प्रश्नों में भी बौद्धिक भूख होती है। यह चीज़ क्या है ? क्यों है ?

जानने की भूख सिर्फ मनुष्य के अंदर है, पशुओं में नहीं है। पक्षियों में नहीं है। इनके अंदर खाने की भूख है। सारा दिन चोगा ढूँढते रहते हैं। सारा दिन पशु चरते हैं। प्यास भी लगती है। फिर शरीर में शक्ति बढ़ जाए तो निकास के ढंग भी ढूँढते हैं। नारी को नर चाहिए, नर को नारी चाहिए, है सारी शारीरिक भूख। मनुष्य जितना समझदार होगा, शारीरिक भूख से कई गुणा अधिक भूख होगी जानने की। एक और नुक्ता भी समझना। जितनी जानने की भूख बढ़ेगी, उतनी खाने-पीने की भूख घट जाएगी। जितनी खाने पीने की भूख प्रबल है, उतनी जानने की भूख मध्यम है।

बहुत सारे स्थानों पर गुरमति सत्संग होते हैं, पर धक्का मुक्की बहुत, मैं लंगर में देखता हूँ। बाकी पूरे देश में भाग-दौड़, तीव्र इच्छा, उससे एक बात साफ स्पष्ट हो जाती है, यह तीव्रता सत्संग में नहीं होती। यह तड़प, यह झलक, यह खिंचाव सत्संग में नहीं होता। अभी खाने की भूख प्रबल है, जानने की भूख मध्यम है। अभी यह पशुओं से कोई बहुत ऊँचा नहीं उठा। क्यों ? पशु सारा दिन खाता है, फिर भी उसके अंदर खाने की भूख होती है, जानने की नहीं। पक्षी सारा दिन दाना ढूँढते हैं। सारी भाग दौड़ का केंद्र खाना पीना है। यह लगभग सभी पशुओं में होता है। भक्त कबीर कहते हैं :

सारो दिनु डोलत बन महीआ अजहु न पेट अघईहै ॥

(अंग ५२४)

सारा दिन जंगल में चरता रहता है, अभी भी पेट नहीं भरा। नहीं, पेट भर भी जाता है, पर खाने की भूख है। सिर्फ शरीर के

तल पर सारी शक्ति रुकी हुई है। कई मनुष्य जीवन के किसी पक्ष के बारे में नहीं जानते। कुछ भी नहीं जानते और जब कुछ भी नहीं जानते तो पशु और इन्सान में क्या अंतर है। अगर ज्ञान की भूख पैदा हो गई तो मनुष्य है। यह भूख नहीं पैदा हुई और इस भूख की पूर्ति का यत्न नहीं तो यह पशु है। यह नहीं कि चार टाँगों वाला पशु है और दो टाँगों वाला मनुष्य है। कहते हैं विज्ञान कह रहा कि बहुत लंबे समय तक मनुष्य भी चार पैरों से चलता रहा है। यह दो हाथ पैरों का काम करते थे। अभी भी बन्दर, अभी भी भालू, जो मनुष्य के बहुत नज़दीक हैं, इस तरह ही चलते हैं, हो सकता है कोई चार पैरों वाले भी मनुष्य हों और हो सकता है कि बहुत दो पैरों वाले भी पशु हों।

गुरु नानक को कोई पत्थर मारता है, कोई भूत बेताल कहता है, पर साँप तो छाया करता है। सर्प छाया करता है। वे पत्थर मारने वाले, वे भूत बेताल कहने वाले पशु हैं। यह सिर पर छाया करने वाला मनुष्य है। शरीर की बनावट उसकी ऐसी है, हस साँप कह देते हैं। मन की बनावट उसकी ऐसी है, मनुष्य है। जब जानने की भूख पैदा हो जाए तो मनुष्य है और बहुत कुछ जान लिया है तो मनुष्यता से भी ऊँचा उठ जाता है, देवता हो जाता है।

जिनि माणस ते देवते कीए करत न लागी वार ।।

(आसा दी वार)

सभी पशुओं का भविष्य है मनुष्य होना और सभी मनुष्यों का भविष्य है देवता होना। कोई पशु मनुष्य हो गया है, उसने भविष्य की प्राप्ति कर ली। कोई मनुष्य देवता हो गया है, उसने भविष्य की प्राप्ति कर ली। चाहे निर्धन है, चाहे धनवान है, भविष्य की चिंता होती है। मूर्ख है, चाहे बुद्धिमान है, भविष्य की चिंता होती है, आज तो जो कुछ है, सो है। भविष्य तो इसका परमात्मा है। यह बात अलग है कि भविष्य की प्राप्ति इसको कब होगी। कितना समय लगेगा ? और कब समय में से निकलेगा ? किसी एक पहलू में मनुष्य बहुत जानने लग पड़ा है और जानता जा रहा है। किसी एक पहलू में महाज्ञानी होने से हज़ारों पहलुओं से अज्ञानी होना पड़ता है, क्योंकि पहलू बहुत हैं।

एक चोटी का संगीतकार है, जो संगीत के बारे में बहुत कुछ जानता है, वह संगीत में तो बहुत आगे निकल गया है, वह कविता के बारे में कुछ नहीं जानता। वह पदार्थ के ज्ञान के बारे में भी कुछ नहीं जानता। जो महाज्ञानी है, वह महा-अज्ञानी है। महा-अज्ञानी कौन है, जो किसी एक पहलू में महाज्ञानी हो। व्यापार का बड़ा ज्ञानी है। दिन रात सोच में व्यापार, दिन भर यादों में व्यापार, व्यापारिक दुनिया के सभी उतार-चढ़ाव को जानता है। वह व्यापार के तल पर तो महाज्ञानी हो गया है पर हज़ारों पहलुओं से तो महा-अज्ञानी है।

दुर्भाग्य है आम मनुष्यों का, किसी को एक पहलू के बीच ज्ञानी देखकर सभी पहलुओं का ज्ञानी मान लेते हैं। वह सभी पहलुओं का ज्ञानी नहीं होता। भक्त भगवान के तल पर तो ज्ञानी हो जाते हैं, बहुत सारे पहलुओं में वे भी अज्ञानी होते हैं। हर पक्ष के वे भी ज्ञानी नहीं। इसलिए भक्तों ने एक बात ऐलान कर कह दी। क्या ? हमने जान-जान कर यह जाना है। क्या ? कुछ नहीं जानते, कुछ नहीं जानते। हमने समझ-समझ कर यह समझा है। क्या समझा है ? हमने कुछ नहीं समझा, कुछ नहीं समझा। इतने महाज्ञानी कहते हैं कि हम कुछ नहीं जानते। इतनी बड़ी समझ है, पर कहते हैं कि हम कुछ नहीं समझे। मैं एक दिन जाप साहिब की दो पंक्तियों की व्याख्या कर रहा था :

अकरम है।। अधरम है।।

हे प्रभु ! तू कोई कर्म नहीं करता। तेरा कोई नियम नहीं। धर्म नियम, तू नियम में नहीं है। यह कलगीधर पातशाह के बोल हैं। जब भी कुछ बनता है, धर्म से बनता है। नियम से बनता है। खड़ा करना है मकान तो ईंटों को नियम के साथ रखोगे तो ही बनेगा। नियम को धर्म कहते हैं। बनाने का नियम है। क्या तोड़ने का भी कोई नियम है ? कपड़ा सिलाई करना है, नियम है। उसकी कटाई का, उसकी सिलाई का। क्या फाड़ने का कोई नियम है ? कोई धर्म है, संसार की उत्पति चलो कोई नियम हो सकती है, क्या प्रलय का भी कोई नियम है ? प्रलय तो नियम में नहीं होता। राज-पाट

चलाना है, वह तो नियम है। अराजकता, गृह-क्लेश, गृह-युद्ध में सब कुछ जायज है। वहाँ कोई नियम नहीं होता। संसार में केवल बनता ही नहीं, बिगड़ता भी है। अब परमात्मा को कह दें महा धर्म है। कौन कहे महा अधर्म है ? यह श्री गुरु गोबिन्द सिंघ की हिम्मत है कि सारा रूप रख दिया। सभी ऋषि मुनियों ने कहा वह प्रकाश है, महा प्रकाश है। तो अंधेरा कहाँ ले जाएँ। कौन सी जगह पर ले जाएँ ? यह कलगीधर की हिम्मत है। कहते हैं :

नमो अंधकारे ।। नमो तेज तेजे ।।

नमस्कार है प्रभु अंधेरे को। उस्ताद ज़ौक कहते हैं कि पाँच तत्वों की तरतीब, विधान, धर्म, बनावट यह ज़िन्दगी है। इनका बिखर जाना ही मौत है। चावल पैदा करने हैं नियम तो है। बोना पड़ेगा, छोटा पौधा लगाना पड़ेगा, गुडाई करनी पड़ेगी। चावल हाथ में आ गए हैं, खिलारने का कोई नियम है। क्या फैंकने का कोई नियम है ? हे प्रभु ! तू महा धर्म है, और अधर्म है। तू महा प्रकाश है पर अंधेरा है। तू महान् सृजनहार है पर प्रलय करता है। हकीकत है। किसी एक पक्ष का जानकार तू सृजनहार है।

ब्रह्मा बस इस एक पक्ष से परिचित है। दूसरे पक्ष का नहीं है, अज्ञानी है। यह ब्रह्मा महा-ज्ञानी है। बहुत कुछ जाना है इसने। इसकी जानकारी से शास्त्रीय संगीत का जन्म हुआ। यह संसार का पहला कवि है। यह संसार का पहला वैद्य राज है। आयुर्वेदिक चिकित्सा का जन्मदाता है। यह संसार का पहला बौधिकी है। इतने पहलुओं में ज्ञानी है। यह सब कुछ कैसे बनता है ? प्रलय कैसे होती है, कुछ भी नहीं पता। प्रलय का ज्ञानी है शिवजी। एक ही पहलु का ज्ञानी है और महाज्ञानी है। प्रलय क्या है ? मौत, खात्मा। पर हज़ारों पहलुओं में महा अज्ञानी है। कोई इन्सान 30 सालों में जवान हुआ है। सुन्दर हुआ है। क्या इसको मरते समय 30 साल लगेंगे ? नहीं। एक सैकिण्ड लगेगा। एक वृक्ष फलों तक पहुँचा है, फूलों तक पहुँचा है। पाँच दस साल लगे हैं। क्या इसको मिटाने में पाँच दस साल लगेंगे ? नहीं, सिर्फ मिनट दो मिनट। आरी से काट कर गिरा दो। बनाने में नियामवली है। धर्म है। धर्म में सहज

है, शांति है, टिकाउ है और तीव्रता नहीं है। तीखापन नहीं है। तेज़ी नहीं है। जैसे कोई यह कहे जीवन खून है और खून कैसे बनेगा। कोई कहे कि एक सैकिण्ड में बने, नहीं। पहले रोटी कमा, पका फिर खा। फिर वह पचेगी तो धीरे-धीरे खून बनेगा। पर किसी का खून गिराना हो तो एक ही चाकू मार दो, बस गया। बनता तो एक सैकिण्ड में नहीं है, बहुत समय लगता है। सभी पहलुओं का ज्ञानी होना कठिन है। श्री गुरु नानक देव जी महाराज कहते हैं :

सोई अजाणु कहै मै जाना

महामूर्ख समझ लो उसको, जो कहता है मैंने जान लिया। खाक जाना तूने।

सोई अजाणु कहै मै जाना जानणहारु न छाना रे ॥

(अंग ३८२)

अज्ञानी समझ लो उसको, जो कहता है मैंने जान लिया। किसी एक पहलु को जान ले और हज़ारों पहलुओं का अज्ञानी। एक बात पढ़ते-पढ़ते धन बारे, वह महा अज्ञानी होगा, बाकी बातों के बारे में अंधा और बहरा होगा।

माइआधारी अति अंना बोला ॥ *(अंग ३१३)*

यह राजनीति में आगे होगा, राजनीति के दांवपेच जानता होगा। बड़ा ज्ञानी होगा, पंडित होगा। राजनीति में क्या होता है ? जिस सीढ़ी पर चढ़ कर पहुँचना है सिंहासन तक,उस सीढ़ी को तोड़ देना हैं तांकि दूसरा न चढ़े। जिसको तोड़ने का तरीका नहीं आता, उसको सिंहासन पर बैठने का तरीका नहीं आता। कई उतारने वाले आ जाएँगे। दुनिया में हर सत्ताधारी, जिन्होंने सीढ़ियों के द्वारा चढ़ कर ऊपर पहुँचना है, उनको तोड़ता है। सदाम ने ईराक के उस डिक्टेटर ने जिन्होंने फौजी अफसरों के द्वारा सत्ता प्राप्त की, सब से पहले वही अफसर उसने मारे। दोस्त थे उसके। पता है क्यों ? यह मुझे सत्ता तक पहुँचा सकते हैं तो यह मुझ से सत्ता छीन भी सकते हैं। इसलिए पहले उनको खत्म किया। वह भी हैरान हैं कि हमने खून पसीना एक करके इसको सिंहासन तक पहुँचाया है और हमें ही मार रहा है।

ज़रा सी भी भनक पड़ जाती थी हिटलर को कि इससे खतरा है, उसको उसी समय एक तरफ करता था। देर नहीं लगाता था। ऐसे मनुष्य राजनीति में तो बहुत आगे होते हैं। बड़ा नाम हो जाता है उनका, पर हज़ारों पहलुओं में महा मूर्ख होते हैं। इस तरीके से एक कवि कविता की तो सारी बारीकियाँ जानता है। यकीन मानो, कवियों की मैंने कोई घरेलू ज़िन्दगी भी ठीक नहीं देखी। कविता बनानी आती है, परिवार बसाना आता ही नहीं। बहुत नैतिक बातें की हैं, पर इनकी अपनी ज़िन्दगी अनैतिक होती है। ऊँची कविता इनकी सुन कर और पढ़ कर कहीं यह न सोच लें कि जाकर इनके दर्शन करें, कहीं समाधि लीन हों। नहीं, किसी शराबखाने में मिलेगा शराब पीता हुआ। रागी है, बहुत सुन्दर कण्ठ है। बहुत बड़ा कीर्तनिया है। गाता है तो श्रोता झूम उठते हैं। इस चक्र में न पड़ना कि यह समाधि लीन होगा। हज़ारों पहलुओं में अज्ञानी है। महा ज्ञानी है वह जो कबूल कर ले मैं नहीं जान सकता। अगर मैं कहता हूँ कि धर्म है तो संसार में अधर्म भी बहुत है। अगर मैं तुम्हें कहूँ कि तू प्रकाश रूप है तो अंधेरा भी बहुत है। अगर मैं तुम्हें कहूँ कि सच्चिदानन्द है तो संसार में कलह-क्लेश बहुत है। गुरु गोबिंद सिंघ जी सब को नमस्कार करते हैं :

नमो कलह करता ।।

हे क्लेश के कर्ता ! नमस्कार।

नमो शांत रूपे ।।

हम सब को प्रणाम करते हैं क्योंकि सब कुछ की समझ नहीं आती। अगर क्लेश को देखें तो इतना क्लेश है कि इसका अंत नहीं पाया जा सकता। अगर शांति को देखें, सरूर को देखें तो इसका भी अंत नहीं पाया जा सकता। जैसे भट्ट जी कह रहे हैं :

रुद्र धिआन गिआन सतिगुर के
कबि जन भल्य उनह जो गावै ।। *(अंग १३९६)*

शिव जी के ज्ञान और समाधि का कौन अंत पाए। हर वक्त मौत दिखाई देती है। सब कुछ मिट जाता है। किसी तरफ मन बिखेरने

को कोई जगह नहीं बची। सब मौत है। जुड़ गया, बहुत गहरा ज्ञान। छः-छः महीने समाधि से उठता नहीं। अब इस ध्यान का कौन अंत पाए ? इस पक्ष में वह बहुत ज्ञानी है, बाकी सभी पक्षों में वह रह गया। आज के इस हुक्मनामे में गुरु अर्जुन देव जी महाराज उस ऊँची अवस्था का ज़िक्र करते हैं, जिसका थोड़ा सा खुलासा मैं आपके सामने रख सकता हूँ। आप श्रवण करो। सतिनाम वाहिगुरु साहिब जी।

वडहंसु महला ५ घरु १

वडहंसु राग के अंदर गुरु अर्जुन देव जी महाराज का यह महावाक्य है, पर एक मात्रा का यह राग है। यह धुन एक ताल, तीन ताल, चौताला, यक्का दादरा, कहरवा आदि यह तालें हम पढ़ लेते हैं। यह वडहंस है, यह बैराड़ी है, यह बिहागड़ा है, यह जैतसरी है, यह गउड़ी है, यह गउड़ी चेती है, यह गउड़ी दीपक है, यह गउड़ी पूरबी है, बस पढ़ लेते हैं। न गउड़ी पूरबी का पता है, न गउड़ी चेती का पता, कुछ भी नहीं पता। कारण ? जो चीज़ बहुतात में हो और ध्यान में न आए, खत्म हो जाती है। यह शौक नहीं रहा। राग खो गया। संगीत खो गया। गुरबाणी व्याकरण और गुरबाणी में आई दलीलें, यह सारी जानकारी भी खो गई। श्रोता भी नहीं रहे। वडहंसु राग में मेरे पातशाह यह शब्द उच्चारण करते हैं और यह धुन, यह राग यहाँ जो दर्ज किया है, एक ताल में है। आगे आप श्रवण करो।

१ओं सतिगुर प्रसादि ॥

छोटा मंगल है। वह प्रभु एक है। वह महाशक्ति एक है। उससे उत्पति, पोषण, यह नाश प्रलय उससे चल रहा है। कर्म अकर्म उसी से चल रहा है। धर्म अधर्म उसी से चल रहा है। वह करता हुआ भी कुछ नहीं करता। वह नियम में होता हुआ भी नियम में नहीं है। कर-कर के परमात्मा नहीं मिलता। फिर किस तरह मिलता है ?

करम करत होवै निहकरम ॥ *(अंग २७४)*

कर-कर के जिस दिन हम भी निष्कर्म हो जाएँ, नहीं। वह सत्यस्वरूप है। वह एक गुरु है, संसार को रोशनी देता है ज्ञान की, समझ देता है, सूझ देता है और वह प्रसादि है, करुणाकर है, दयालु है, कृपा का सागर है।

अति ऊचा ता का दरबारा ॥

बहुत ऊँचा है उसका दरबार। किस से ऊँचा ? समझ से ऊँचा। और कोई ऊँचाई नहीं है। ब्रह्माण्ड में ऊँचाई निम्नता नहीं है। पास पड़ा हुआ एक पत्थर चमकता तो है, चाहे है, पर समझ में नहीं है तो समझ से ऊँचा है। जौहरी की समझ में है। मेरी समझ में नहीं है। मेरी समझ से ऊँचा है। सोना पड़ा है, सुनार की समझ में है, मेरी समझ में नहीं है। अगर समझ में आ गया, उस तक पहुँच गए। जो समझ में न आए, हम उस तक नहीं पहुँचे। कितना भी समझें, हे प्रभु! समझ नहीं पहुँचती तुझ तक। इसलिए तेरा दरबार बहुत ऊँचा है।

अंतु नाही किछु पारावारा ॥

तू शुरु कहाँ से होता है ? यह भी पता नहीं। अंत कहाँ, समाप्ति कहाँ ? यह भी पता नहीं। न किनारे का पता, न पार का पता, न आदि का पता न अंत का पता, हे प्रभु! हम तेरा आदि नहीं पा सकते। हम जिसे जन्म दिन मानते हैं, जन्म दिन ही नहीं है। मानते हैं सिर्फ तसल्ली के लिए।

ऐसे घर हम बहुतु बसाए ॥ *(अंग ३२६)*

कबीर जी कहते हैं कि इस तरह का जन्म मेरा बहुत बार हो चुका है। किसी का पुत्र बना, किसी का पिता बना, किसी की पुत्री बना, किसी की पत्नी बना। इस चक्र में न पड़ना कि एक पुरुष बार-बार मर कर शायद पुरुष ही होता हो। पुरुष जीता है स्त्री की कशिश में। स्त्री जीती है पुरुष की कशिश में। वृद्ध होता-होता पुरुष स्त्री जैसा हो जाता है। उसके बीच में कोमलता आ जाती है। उसकी पकड़ भी कम हो जाती है। अगर कोई पुरुष

ढंग से जीएगा, बूढ़ा होते-होते स्त्री जैसा हो जाता है। जिम्मेदारियाँ दूर करता है। जीवन भर स्त्री पुरुष की कशिश में रही है, वृद्ध होते-होते पुरुष जैसी हो जाती है। ज़्यादा झगड़ती है। स्त्री के बोलों में भी कठोरता आ जाती है। अगर पुरुष जैसी हो गई तो अगला जन्म भी पुरुष का। कई इस जन्म में भी हो जाती हैं। जिसको हम जन्म दिन मानते हैं, यह नहीं है। पता नहीं कितने समय से हम यहाँ जी रहे हैं, इस ब्रह्माण्ड में, पर समझ से दूर है। तेरा दरबार बहुत ऊँचा है।

कोटि कोटि कोटि लख धावै ॥

एक नहीं, करोड़ों अपनी अक्ल दौड़ाते हैं, पार को समझने के लिए।

इकु तिलु ता का महलु न पावै ॥ १ ॥

पर उसका महल, उसका घर एक तिल जितनी भी समझ में नहीं आता। सारे का सारा घर, उसके महल का पता नहीं चलता। अगर अरबों खरबों ईंटें लगी होती हैं, एक ईंट का भी पता नहीं चलता। कुछ भी समझ नहीं आता, मेरी समझ से दूर है।

सुहावी कउणु सु वेला जितु प्रभ मेला ॥ १ ॥ रहाउ ॥

वह समय सुन्दर है, वह वक्त महान् है जिस दिन प्रभु का मिलाप होता है। उसमें लीन हो जाएँ। अगर बूँद सागर में लीन हो गई है तो सागर का क्या अंत पाएगी। सागर होकर जी सकती है। एक मौका दिया है जीव को परमात्मा ने, तू परमात्मा होकर जी सकता है, परमात्मा को समझ नहीं सकता।

तू दरीआउ दाना बीना मै मछुली कैसे अंतु लहा ॥

(अंग २५)

मछली सागर में जी सकती है। पूरे सागर में जी सकती है। आनन्द ले सकती है, रस ले सकती है, जीवन ले सकती है। अब तोले सागर को, नापे सागर को, नहीं, यह उसकी समझ से दूर है। वह सुन्दर समय है, वह समय सुहावना है, जब ऐसे परमात्मा में जीना नसीब होता है।

लाख भगत जा कउ आराधहि ॥

इस वक्त को ढूँढने के लिए, इस मिलाप को ढूँढने के लिए लाखों भक्त भावना से भरे हुए हृदय से उसकी आराधना करते हैं, साधना करते हैं।

लाख तपीसर तपु ही साधहि ॥

और कई ऐसे हैं जो तरह-तरह के तप करते हैं, व्रत रखना तप है। धूना तपाना तप है। सर्दियों में जल धारा करना तप है। शरीर को कष्ट देना तप है। शरीर जो माँगे, नहीं देना, तप है। इस तरह के लाखों हैं। कोई भूखा रहता है, तप है। कोई धूप में बैठा रहता है, तप है।

देवतिआ दरसन कै ताई दूख भूख तीरथ कीए ॥

(अंग ३५८)

गुरु नानक साहिब कहते हैं, हे प्रभु! कितनों ने दुख उठाए हैं। कितनों ने भूख का बोझ सिर पर उठाया है। कितने तीर्थों पर भटक रहे हैं। एक वृत्ति को लेकर, कौन सी ?

तउ कारणि साहिबा रंगि रते ॥ *(अंग ३५८)*

तेरा रंग प्राप्त हो। तेरी सूझ प्राप्त हो। तेरा रस प्राप्त हो। कोई कुछ कर रहा है, कोई कुछ कर रहा है। अनेक तपीश्वर हैं जो तप साधना करते हैं।

लाख जोगीसर करते जोगा ॥

अनेक योगी हैं, बेशुमार योगी हैं जिनकी गिनती नहीं की जा सकती। जो गिने नहीं जा सकते। ऐसे योगी तरह-तरह की योग साधना के द्वारा इसको प्राप्त करने के लिए उस सुहावने वक्त को हासिल करने की कोशिश करते हैं, यत्नशील रहते हैं।

लाख भोगीसर भोगहि भोगा ॥ २ ॥

फिर अनेक भोगी हैं, जो तरह-तरह के पदार्थों का रस लेते हैं। स्वाद लेते हैं। अनेक हैं जो नहीं गिने जा सकते और वह भोग के रस में से तेरा रस ढूँढने की कोशिश करते हैं। मनुष्य

भोजन के रस में भी ऐसा रस चाहता है जो कभी बेरस न हो और ढूँढता भोजन में से है। मनुष्य रूप में से ही ऐसा रस चाहता है जो कभी बेरस न हो। संसार के बीच यह रस बेरस हो जाता है।

रारा रसु निरस करि जानिआ ।। *(अंग ३४२)*

पर भोगी रस चाहता है और रस तो परमात्मा है। चलो अभी योग में नहीं, भोग में सही। सो बेशुमार ऐसे हैं जो भोग के रस में, हे प्रभु! तेरा रस मानने की कोशिश करते हैं।

घटि घटि वसहि जाणहि थोरा ।।
है कोई साजणु परदा तोरा ।।

हे प्रभु! बसता तो तू सभी में है, पर जानकारी बहुत सीमित है। व्यापक है, हर एक ज़र्रे में, हर मनुष्य में, हर प्राणी में, पर ऐसी ज़रूर कोई बात है, पर्दा है जो नहीं दिखाई देता। तू सभी में रहता हुआ निर्लिप्त है। रहता हुआ भी नहीं है। यह एक पर्दा है। अगर एक इन्सान सुखी है, तू उसके सुख में शामिल नहीं है। निर्लिप्त है। अगर एक इन्सान दुखी है, तू उसके दुख में शामिल नहीं है। है तू उसके पास। तू दुख सुख से रहित है। एक इन्सान तंदरुस्त है, उसके पास तू निर्लिप्त है। है उसमें। एक इन्सान बीमार है, है तू उसमें पर निर्लिप्त है, फिर भी पर्दा है। वह जी रहा है, तू उसके जीवन में भी नहीं है। वह मर गया, तू उसकी मौत में भी नहीं है। हे परिपूर्ण परमात्मा! ज़रूर इस तरह तेरा पर्दा है, जिसका पता नहीं चलता। समझ नहीं आती तेरी निर्लिप्तता की।

करउ जतन जे होइ मिहरवाना ।।

कुछ ऐसे हैं जो यत्न करते हैं कि उसके रहम के पात्र बन जाएँ, उसकी रहमत के पात्र बन जाएँ। कारण? जान-जान कर तो नहीं जाना जाता। समझ समझ कर तो नहीं समझा जाता। पता ही नहीं चलता उसकी निर्लिप्तता का। अब कुछ ऐसा यत्न करें कि उसकी कृपा हो जाए, उसकी रहमत हो जाए। जब भी किसी के साथ कोई घटना घटी है, उसने यही कहा तेरी कृपा, तेरी रहमत।

इस तरह का कुछ यत्न करते हैं, कहीं उसकी मेहरबानी हो जाए, कृपा हो जाए।

ता कउ देई जीउ कुरबाना ॥ ३ ॥

जिन पर इस ढंग की कृपा हो जाती है, मैं अपना जीवन उनके चरणों पर अर्पण करूँ। उनको समर्पण करूँ अपनी ज़िन्दगी।

फिरत फिरत संतन पहि आइआ ॥

घूमते-घूमते मैं उनके पास आया, जिन पर कृपा हो गई है। जिन पर रहमत हो गई है। जो संतजन हैं, उनके पास आया।

दूख भ्रमु हमारा सगल मिटाइआ ॥

जिनकी संगत ने दुख मिटा दिया। भ्रम मिटा दिया, गलतफहमी निकाल दी।

महलि बुलाइआ प्रभ अंम्रितु भूंचा ॥

प्रभु ने अपने पास बुला लिया, अपने महल में बुला लिया और अमृत भोजन खाने को दिया।

कहु नानक प्रभु मेरा ऊचा ॥ ४ ॥ १ ॥

उस भोजन के खाते ही समझ आई, बहुत ऊँचा है, बहुत ऊँचा है। भोजन खा कर भी, रस मान कर भी, आनन्द मान कर भी समझ यह आई कि मैं नहीं पहुँच सकता तेरे पास। मैं नहीं जान सकता। रस मान लिया है, मैं नहीं जान सकता। मैंने जान लिया है। क्या ? मैं नहीं जान सकता। भूल चूक की क्षमा।

वाहिगुरु जी का खालसा ॥ वाहिगुरु जी की फतह ॥

संत भले हरि राम

राग बैराड़ी महला ४ घरु १ दुपदे
१ओं सतिगुर प्रसादि ॥

**सुनि मन अकथ कथा हरि नाम ॥
रिधि बुधि सिधि सुख पावहि
भजु गुरमति हरि राम राम ॥ १ ॥ रहाउ ॥
नाना खिआन पुरान जसु ऊतम
खट दरसन गावहि राम ॥
संकर क्रोड़ि तेतीस धिआइओ
नही जानिओ हरि मरमाम ॥ १ ॥
सुरि नर गण गंध्रब जसु गावहि
सभ गावत जेत उपाम ॥
नानक क्रिपा करी हरि जिन कउ
ते संत भले हरि राम ॥ २ ॥ १ ॥** *(अंग ७१९)*

वाहिगुरु जी का खालसा ॥ वाहिगुरु जी की फतह ॥

सम्मान योग्य गुरु रूप साधसंगत जी ! बैराड़ी राग के अंदर गुरु रामदास जी महाराज के पावन वाक्य की काव्य शैली दो-पदा है। राग बैराड़ी है, पातशाही चौथी। पहली पंक्ति में धर्म का मूल सिद्धांत गुरु रामदास जी महाराज ने हमारे सामने रख दिया है।

सुनि मन अकथ कथा हरि नाम ॥

हरि का ज्ञान सुन। कौन सा ? जो अकथ है। जो बोला नहीं जा सकता, कहा नहीं जा सकता और जब कहा नहीं जा सकता तो क्या सुना जाए ? इसको दो रूपों में बयान करूँगा। जो हम सुन रहे हैं, यह सुनना नहीं है।

अखी बाझहु देखणा विणु कंना सुनणा ।। *(अंग १३९)*

जो हम सुन रहे हैं, यह अकथ भी नहीं। मैं कथन कर रहा हूँ, बोल रहा हूँ। यह किस तरह अकथ हो सकता है। अकथ का अर्थ है जो कथन नहीं हो सकता। अकथ का मतलब है जो बोला नहीं जा सकता। मैं तो बोल रहा हूँ, तुम्हें सुना रहा हूँ। दुनिया के सभी अवतार पुरुष बहुत बोले हैं। उन सभी ने ही कह दिया है अकथ। कथन नहीं हो सकता, बोला नहीं जा सकता। अकथ है तो फिर कथा करते हो।

कथनी बदनी कहनु कहावनु ।।
समझि परी तउ बिसरिओ गावनु ।। *(अंग ४७८)*

समझ आ गई, कथा करनी समाप्त, कथा सुननी समाप्त। जितनी देर तक समझ नहीं आई, कथा करनी भी पड़ेगी, कथा सुननी भी पड़ेगी। एक और भी मैं अर्ज़ करूँ, दूसरों से संबंध जोड़ना है, बोल-बोल कर जुड़ेगा, अपने साथ संबंध जोड़ना हो, बोल कर जुड़ेगा। मैंने अपने साथ संबंध जोड़ना है, मैं बोल कर जोड़ूँगा। अपने साथ संबंध जोड़ना क्या है ? अपने मन से संबंध जोड़ना क्या है। अपने विचार से संबंध जोड़ना है। अपने साथ संबंध जोड़ना क्या है। अपनी सोच से संबंध जोड़ना है। बड़े हमारे संबंधी होंगे। बड़ों से हमने संबंध जोड़ा होगा। एक बात मैं दावे से कह दूँ, अपने से कोई संबंध नहीं। हर इन्सान अपने आप से टूटा हुआ है; दूसरों से जुड़ा हुआ है या जोड़ने की कोशिश करता है। इसलिए देखा गया है कि एक पिता जितना पुत्र के नज़दीक है, अपने नज़दीक नहीं है। एक पिता जो पुत्र के बारे में जानता है, अपने बारे में नहीं जानता। एक पति जितना अपनी पत्नी के नज़दीक है, अपने नज़दीक नहीं है। वह पत्नी के बारे में जितना जानता है, अपने बारे में नहीं जानता, क्योंकि नज़दीक होते अवगुण दिखाई देंगे, दूर होने से नहीं दिखाई देंगे।

कहते हैं वह शीशा जो बड़ा स्वरूप करके पेश करता है, अगर उस शीशे में अपना चेहरा देखे तो एक-एक रोम, एक-एक खड्डा

दिखाई देगा। अपना चेहरा देखना बहुत मुश्किल हो जाएगा। क्यों ? नज़दीक देखते-देखते बहुत नज़दीक हो गए। ज़रा त्वचा एक तरफ करें, मास है, देखना मुश्किल हो जाएगा और मास एक तरफ करें तो हड्डियाँ है।। इसलिए हर मनुष्य कहता रहेगा यह कुछ नहीं, यह कुछ नहीं है। कौन-सा पिता अपने पुत्र से संतुष्ट हुआ है ? कौन-सा पति अपनी पत्नी से संतुष्ट हुआ है ? कौन-सा भाई अपने भाई से संतुष्ट हुआ है ? कारण। नज़दीक है तो नज़दीक होते हुए अवगुण दिखाई देते हैं। खड्डे दिखाई देते हैं। एक मनुष्य जितना अपने मित्र के नज़दीक है, अपने नज़दीक नहीं है। हर मनुष्य का संबंध दूसरों से है, अपने साथ नहीं है।

परमात्मा से संबंध तब जुड़ता है, जब कोई मनुष्य परमात्मा से संबंध जोड़ने से पहले अपने आप से संबंध जोड़े। यह बाकी जो धर्म की दुनिया में प्रसार चल रहा है, यह सब कर्म-कांड है। अगर कहीं कर्म-कांड में इन्सान रुक जाए तो आगे जाए ही न, कर्म-कांडी इन्सान जितना कठोर हो जाता है, शायद ही कोई हो। कर्म शरीर के तल पर है। कर्म अदृष्ट है, शरीर के तल पर प्रगट होते हैं। कर्म तो मोटी बुद्धि वाला भी कर सकता है। शारीरिक कर्म तो मूर्ख भी कर सकता है। शारीरिक कर्म तो पापी भी कर सकता है। शारीरिक कर्म तो नास्तिक भी कर सकता है। दान तो बड़े-बड़े बेईमान भी देते हैं। ज्ञान की बातें तो बड़े-बड़े मूर्ख भी करते हैं। तीर्थों पर तो बड़े-बड़े पाखण्डी भी जाते हैं। कर्म तो कोई भी कर सकता है। मंदिर, मस्जिद, गुरुद्वारे में तो चोर भी आ सकते हैं, निरा साधुओं की बात थोड़ी है। यह ठीक है कि यात्रा शारीरिक कर्म से करनी पड़ेगी, पर कोई इन्सान पूरी ज़िन्दगी यात्रा में रहे, यात्रा को ही स्थान ठिकाना मान ले, यह तो मूर्खता होगी। कर्म-कांड को ही सब कुछ समझ ले।

एक आदमी रोज चंवर करता था बाहर से आकर, पर उसने अपना पक्का दावा ही समझ लिया कि मैंने ही करना है अरदास के वक्त। एक दिन दूसरे ने उठा लिया तो वही चंवर उठा कर उसके माथे पर मारा। यह मैंने उठानी है, यह तो मेरा कर्म है,

तूने किस तरह उठा लिया। चंवर के लिए लड़ पड़े, झाड़ू के लिए लड़ पड़ते हैं। बर्तनों के लिए लड़ पड़ते हैं। जूते झाड़ने वाले जूते मारने लग जाते हैं। दूसरों से संबंध जोड़ना है, बोल-बोल कर जुड़ेगा। बाहर से कुछ प्राप्त करना है, कर कर के प्राप्त होगा। बाहर से कुछ समझना है, समझ-समझ कर ही समझना पड़ेगा। मैंने कपड़े सिलना सीखना है। मैंने मोटर चलानी सीखनी है, मैंने रेलगाड़ी चलानी सीखनी है, मैंने कुछ भी बाहर का सीखना है। सीख-सीख कर ही सीखना पड़ेगा। परमात्मा को जानने के लिए अज्ञान चाहिए, मैं कुछ भी नहीं जानता। यहाँ से यात्रा आरम्भ होगी। प्राप्ति कर-कर के नहीं होगी। क्यों ? कर-कर के मेरे करने से जो कुछ मुझे मिलेगा, वह मेरे करने से बड़ा नहीं हो सकता। मेरा कर्म बड़ा हो जाएगा। परमात्मा बड़ा नहीं है, क्योंकि मैंने करने से प्राप्त किया है। कर के प्राप्त किया हैं। फिर तो मेरा करना ही महान् हो गया।

करम करत होवै निहकरम ॥ *(अंग २७४)*

कर्मों पर जो धर्म खड़ा है, निर्मल नहीं हो सकता। कर्म करते कुछ न कुछ गलतियाँ होंगी। कर्म करते भूलें होंगी। मैं पाठ कर रहा हूँ तो भूलें भी होंगी। मैं कीर्तन कर रहा हूँ, गलती हो सकती है। मैं सेवा कर रहा हूँ, भूल हो सकती है। मैं दान कर रहा हूँ, भूल हो सकती है। करने में तो गलती होगी। चाहे वह कर्म सामाजिक है, चाहे राजनैतिक है, चाहे धार्मिक है। राजनैतिक लोग राजनीति में गलतियाँ करते हैं। समाज सुधारक लोग समाज में गलती करते हैं। धर्म में भी गलतियाँ। सही कथा तो हो ही नहीं सकती। गलत ही हो सकता है, क्यों ? सही कथा क्या है ?

सुनि मन अकथ कथा हरि नाम ॥ *(अंग ७१९)*

वह तो अकथ है। कथा में तो गलतियाँ होंगी। मुझे अच्छी तरह याद है, लगभग सन् 1962 की बात है। बहुत पुरानी। प्रिंसीपल गंगा सिंघ जी शीश गंज साहिब कथा कर रहे थे। एक साल उन्होंने कथा की थी। कथा करके बाहर आए, एक नवयुवक कहीं जोश से भरा हुआ था। उसको एक दो अक्षरों का ज्यादा ज्ञान होगा।

भारी भोजन खा लें तो कई बार वह भी हज़म नहीं होता। किसी को तो ज्ञान भी नहीं पचता। किसी को किया हुआ कीर्तन नहीं पचता, सुना हुआ कीर्तन भी नहीं पचता। बात पची न। प्रिंसीपल साहिब बाहर आए। वह नवयुवक आवेश में आकर कहने लगा, "प्रिंसीपल साहिब ! आप से एक अक्षर गलत बोला गया है। यह नहीं बोलना चाहिए था।" पता है प्रिंसीपल साहिब ने क्या कहा ? तू कोई समझदार नहीं है। क्यों ? एक अक्षर, एक घण्टा मैंने बोला। हज़ारों लाखों अक्षर मैंने बोले हैं। पता नहीं कितने मैंने गलत बोले होंगे। तुझे एक अक्षर गलत दिखाई दिया है। तू कोई समझदार नहीं है। अभी पूरा ज्ञान नहीं है। एक अक्षर ? यह किस तरह हो सकता है कि एक अक्षर गलत हो ? बहुत गलत हो सकते हैं। सही कथा हो ही नहीं सकती। भूल तो हर समय होगी। हर जगह होगी। जप-जप कर नहीं मिलता। तुम कहोगे कि मैं कहता ही यही हूँ जपो। सतिगुरु कहते हैं :

जपहु त एको नामा ।। अवरि निराफल कामा ।।

(अंग ७२८)

कर करके नहीं मिलेगा। सभी महापुरुष कहते हैं कि कुछ करो। बोल बोल कर नहीं मिलेगा। सभी महापुरुष कहते हैं बोलो।

बाबा बोलना किआ कहीऐ ।। जैसे राम नाम रवि रहीऐ ।।

(अंग ८७०)

बोलना तो है। अब बोलने को भी सभी कहते जाते हैं। पर गजब की बात है, कहते हैं अकथ, कथा हो ही नहीं सकती। कथा कर कर के मुझे इतना पता चला है कि यह कथा करने से नहीं मिलता, नहीं तो अब तक मुझे मिल गया होता। अखंड कीर्तन हो सकता है, अखंड अवस्था। अखंड अवस्था में तो खामोशी है। अजपा जाप है। जाप सो अजपा जापे। जप भी नहीं है। पर जप की जरूरत है। कीर्तन की जरूरत है। उस अवस्था तक पहुँच जाए, जहाँ चुप हो जाए। अपने साथ संबंध जोड़ना है, चुप्पी से। ज़्यादातर लोग अपने साथ संबंध जोड़ना नहीं जानते। दूसरों के साथ

बैठना जानते हैं। कहीं अकेले बैठे हों तो कोशिश करते हैं कि दूसरा आए। पंजाब में तो कहते हैं कि अकेला तो भगवान भी न हो। पर कौन पंजाबियों को बताए कि भगवान तो है ही अकेला। इन्सान की सारी मुश्किलें इसलिए हैं कि अकेला नहीं है। उसको दूसरा चाहिए। पत्नी चाहिए, माँ चाहिए, भाई चाहिए, सारे झंझट चाहिए, जिन झंझटों में इन्सान आप पड़ा है, भगवान को भी उन झंझटों में डालना चाहता है। यकीन जानो, जिस दिन कोई अकेला हो जाता है, भगवान जैसा ही हो जाता है।

रहहि इकांति एको मनि वसिआ आसा माहि निरासो ॥

(अंग १३८)

सुन हे मन ! सुन। यहाँ कानों को नहीं कहा, मन को कहा है। अगर कानों को कहते तो फिर बोलने की जरूरत थी।

सुनि मन अकथ कथा हरि नाम ॥

एक गाथा मुझे याद आई है। एक सूफी संत हुए हैं, बहुत महान् हाफिज़। सुबह शाम वाइज़ करते थे, कथा करते थे। कुरान की तलावत करते थे। कुरान की आयतों की व्याख्या करते थे। ईरान की बात है, बहुत दुनिया इकट्ठी होती थी। मैं वह स्थान देख कर आया हूँ। जब मुझे वहाँ के गाईड ने बताया कि जब हाफिज़ बोलते थे, उस ज़माने में दस बारह हज़ार लोग यहाँ बैठते थे। सच में ही इमारत बहुत बड़ी है और गुंबद ही गुंबद हैं। मैंने कहा मैं नहीं मानता दस बारह हज़ार। मैंने कहा उन दिनों में माइक्रोफोन नहीं थे। बारह हज़ार आदमियों तक हाफिज़ अपनी आवाज़ कैसे पहुँचाता होगा ? मैंने कहा इतनी अतिकथनी न करो। 100-200 होते होंगे, 400-500 होते होंगे। मुझे कहने लगा, इस भवन में, इस बड़ी मस्जिद में इतने लोग बैठ सकते है। ? मैंने कहा दस हज़ार बैठ सकते हैं। कहने लगे बैठ सकते थे। मैंने कहा किस तरह सुनते थे ? मुझसे कहने लगा आप मस्जिद के आखिरी कोने में बैठ जाओ, मैं बोलता हूँ। मैं सब से आखिर में बैठ गया, यह करिश्मा देखने के लिए। ऊँची जगह बनी हुई थी इमाम की। खड़े होकर

जैसे उसने बाँग दी, अल्लाहू कहना शुरु किया, मुझे वहाँ तक सुनाई दिया। कहते हैं इस तरह लोग सुनते हैं। यह जितने गुंबद हैं, यह गूंज पैदा करते थे।

जिस इन्सान को दस हज़ार लोग सुबह और दस हज़ार शाम को सुनते थे और जो किसी हद तक सारा दिन बोलता था। कोई प्रश्न करे तो बोलता था, पर उसका एक निकटवर्ती था, शेख इब्राहिम। जब वह प्रश्न करता था कि वह लामकान, यह लाशरीक ऐसा जो खुदा तायला है, वह क्या है ? कैसे मिलता है, हाफिज़ चुप कर जाता था। इब्राहिम हैरान हो गया। सुबह बोलता है, शाम को बोलता है, हज़ारों में बोलता है, दिन भर बोलता है, पर जब मैं प्रश्न करता हूँ तब चुप हो जाता है। इब्राहिम ने समझा मेरे प्रश्न का जवाब इसके पास नहीं है। क्योंकि बाकियों के सवाल का जवाब दे देता है, मेरे सवाल का नहीं देता। मैं अर्ज करूँ, व्यर्थ के सवालों का जवाब नहीं हो सकता।

अरबी कहावत है मनुष्य अपने कर्मों से पहचाना जाता है कि यह इन्सान छोटा है या बड़ा है। दूसरा कहता है मनुष्य के मानसिक मंडल की पहचान उसके प्रश्नों से होगी, सवालों से। कई बार सवाल इतने निम्न होते हैं, उससे पता लगता है कि मनुष्य कितना निम्न है। चलो इसकी सामाजिक ज़िन्दगी हो सकती है, राजनैतिक हो सकती है, धार्मिक तो नहीं है। इब्राहिम ने समझ लिया कि मेरे सवाल का उत्तर हाफिज़ के पास नहीं है।

एक दिन हिम्मत करके इब्राहिम पूछ बैठा कि हाफिज़ साहिब, आप मेरे मित्र भी हो, सिर्फ मित्र ही नहीं, मैं आपको मुरशिद भी मानता हूँ। मैं आपको धार्मिक मुखिया भी मानता हूँ। मैं तुम्हारे विचारों से सहमत भी हूँ। आप सभी के सवालों के जवाब देते हो, पर मेरे सवाल का नहीं। ऐसा क्यों ? मेरा सवाल सवाल नहीं है ? आप मेरे सवाल का क्यों जवाब नहीं देते ? हाफिज़ कहते हैं कि सवाल करो। उसने फिर सवाल किया, वह जो लामकान है, वह जो लाशरीक है, वह जो लामहदूद है, ऐसा जो खुदावंद तायला है, वह क्या है ? उसकी कैसे प्राप्ति होगी ?

हाफिज़ फिर चुप। नहीं बोले। काफी देर तक नहीं बोले। पता है इब्राहिम ने क्या कहा ? या तो मैं नासमझ हूँ, मूर्ख हूँ, या तुम्हारे पास मेरे सवाल का जवाब नहीं। मैं हिम्मत करके कह रहा हूँ कि इन दोनों में से कोई बात तो है। हाफिज़ कहने लगे कि तू मूर्ख है, मैं ऐसा नहीं कहूँगा। जवाब मैं तुम्हें देता रहा हूँ। जब भी तूने पूछा है मैंने जवाब दिया है। आप तो बोले नहीं। अबोल, चुप ही तो जवाब था। मन चुप कर जाए तो तुझे पता लग जाएगा। अजपा हो जा। अकथ की दुनिया में चला जा, पता चल जाएगा। ज़ुबान से भी बोल रहा है, मन से भी बोल रहा है। चुप कर जा ज़ुबान से, चुप कर जा मन से, फिर तुझे पता चल जाएगा लामकान का, लाशरीक का, लामहदूद का, खुदावंद तायला का, अब चुप हो, मन को चुप करा। इब्राहिम कहने लगा यह तो बहुत मुश्किल काम है। हाफिज़ कहने लगे, तुझे जवाब देना भी बहुत मुश्किल काम है, जवाब उस दिन ही मिलेगा, जिस दिन तू चुप कर जाएगा। जाप सो अजपा जापे। पहले तो रसना जपे वाहिगुरु वाहिगुरु। फिर यह जपना ऐसे हो जाएगा जैसे साँस है। अब साँस मैं नहीं चलाता, चलती हैं।

एकु सबदु मेरै प्रानि बसतु है बाहुड़ि जनमि न आवा ।।

(अंग ७९५)

पहले तो भोजन का निवाला मेरे मुँह में है और मेरा मुँह चल रहा है, मेरे दाँत चल रहे हैं। वही भोजन जब पच जाता है, खून बन जाता है, नसों में चलता है, फिर वही भोजन जीवन बन गया। जीवन तो खून है। खून न हो तो ज़िन्दगी नहीं है। खून न हो तो जी नहीं सकता, तभी तो डाक्टर कहते हैं इसको खून देना पड़ेगा, नहीं तो जिन्दा नहीं रह सकेगा। खून तो ज़िन्दगी है। नसों में जब खून चलता है तो किसी को पता नहीं चलता। अजपा जाप का किसी को भी नहीं पता। कोई दुकान में बैठा हुआ भी अजपा जाप के बीच हो सकता है। कोई काम करते ही अजपा जाप में हो सकता है। नंद लाल गुरु गोबिंद सिंघ जी महाराज के अनन्य भक्त, वह कहते हैं कि मेरे हाथों को देखोगे यह कामकाज में जुटे हुए

हैं। मेरे दिल को देखोगे यह यार में जुड़ा हुआ है। यह चुप कर गया। परमात्मा तो तब प्राप्त होता है जब चुप कर जाएँ। इससे मुश्किल अन्य कोई काम नहीं है। क्योंकि मन चुप करता ही नहीं। जुबान तो बोलते-बोलते थक भी जाती है, चुप करना पड़ता है। मन चुप करता ही नहीं। सपने में भी बोलने की दुनिया का चलन है जब सो जाएँ।

मैं अर्ज़ करूँ ब्रह्मज्ञानी कौन है? जिसका मन चुप कर गया है। भक्त कौन है? जिसका मन चुप कर गया है। जो डेरों की खातिर लड़ रहे हैं, गोलकों की खातिर लड़ रहे हैं, माथा अकने की खातिर लड़ रहे हैं। क्या वे संत हैं? नहीं। मन चुप कर गया है, वह संत है। पहरावा संत नहीं है, रूप रंग संत नहीं है, अवस्था संत है। गुरु रामदास जी फुरमाते हैं, हे मन! सुन उसकी कथा और वह कथा अकथ है। जुबान से नहीं कथन होगी।

राग बैराड़ी महला ४ घरु १ दुपदे
१ओ सतिगुर प्रसादि ॥
सुनि मन अकथ कथा हरि नाम ॥

वह जो हरि का नाम है, वह जो हरि की हस्ती है, वह जो हरि का स्वरूप है, जिसकी कथा नहीं हो सकती, सुन।

रिधि बुधि सिधि सुख पावहि
भजु गुरमति हरि राम राम ॥ १ ॥ रहाउ ॥

क्योंकि मन का चुप करना ही अनहद नाद का सुनाई देना है। मन चुप कर जाए, परम प्रकाश दिखाई देता है। मन चुप कर जाए, अनहद नाद सुनाई देता है। ऐसी संगीत की धुन जो पहले कभी नहीं सुनी। ऐसा रंग रूप जो पहले कभी नहीं देखा। मन चुप कर जाए तो जुबान को वह स्वाद आ जाता है। पानी में भी जो छत्तीस प्रकार के भोजन में भी किसी को नहीं आया।

भृर्तहरि उदयपुर के राणा को कहते हैं कि सतू में नमक और पानी डालकर जब मैं घोल कर पीता हूँ, हे राजन! जितना रस मुझे उस सतू में आया है, तू छत्तीस प्रकार के भोजन में भी नहीं ले

सकता। कारण ? मन चुप कर गया है, जुबान का स्वाद हज़ार गुणा बढ़ जाता है। अनहद नाद सुनाई देते हैं। परम प्रकाश दिखाई देता है। भृर्तहरि कहते हैं कि तुम्हें खाक स्वाद का पता है। प्रभु महा रस है। वह महान् रस हम अनहद नाद में सुनते हैं। वह महा रस हम महान् रूप में देखते हैं। वह महा रूप हम भोजन के रूप में मानते हैं। तुम्हें क्या पता ? मन चुप कर जाए तो परम प्रकाश सुनाई देता है। फिर ऐसी कुछ शक्तियाँ प्राप्त होती हैं जो सो गई हैं, जाग गई हैं। जैसे बम के अंदर शक्ति तो बहुत है, पर चलाओ तो ही प्रकट होगी, वैसे तो नहीं। पैट्रोल के अंदर ताकत तो बहुत है, पर प्रयोग करने का ढंग हो, फिर रेल चलेगी, मोटरें चलेंगी, कारखाने चलेंगे, बहुत कुछ होगा।

मनुष्य के अंदर बहुत शक्तियाँ हैं, अगर कोई जगाए तो वह जाग जाती हैं। उन शक्तियों को ही सिद्धियाँ कहते हैं। संसारिक तरक्की भी प्राप्त हो जाती है, रिद्धियाँ। कहते हैं अगर तुझे ज्ञान चाहिए, बुद्धि चाहिए, रिद्धि चाहिए, सिद्धि चाहिए तो उस अकथ कथा जो परमात्मा का नाम है, इसको सुन। यह सब कुछ भी तुझे प्राप्त होगा।

नाना खिआन पुरान जसु ऊतम खट दरसन गावहि राम ।।

वह जो परिपूर्ण परमात्मा है, वह जो नाम है, उसको पता नहीं कितने पुराण अपने ढंग से गा रहे हैं। कितने शास्त्र अपने ढंग से गा रहे हैं। कितने वेद अपने ढंग से गा रहे हैं। उसकी बात कर रहे हैं, बोल-बोल कर जो नहीं बोला जा सकता। उसकी चर्चा कर रहे हैं, जो नहीं हो सकती।

संकर क्रोड़ि तेतीस धिआइओ नही जानिओ हरि मरमाम ।। १ ।।

ऐसा जो परिपूर्ण परमात्मा है उसके मर्म को, उसके राज को शंकर ने भी नहीं जाना। कुरानों ने भी अंत कथन नहीं किया, बेअंत करके कहा। यह सभी कह रहे हैं कि अंत नहीं पाया जा सकता। अबोल अवस्था है।

सुरि नर गण गंध्रब जसु गावहि सभ गावत जेत उपाम ।।

गा रहे हैं देवते, गा रहे हैं बड़े-बड़े संगीतकार, दार्शनिक, चिंतक। जितनी परिपूर्ण परमात्मा ने सृष्टि बनाई है, अपनी समझ से गा रहे हैं

आपु अपुनी बुधि है जेती ॥ *(चौपई साहिब)*

नानक क्रिपा करी हरि जिन कउ
ते संत भले हरि राम ॥ २ ॥

पर जिन पर कृपा हुई है, परिपूर्ण परमात्मा की रहमत हुई है, बख्शिश हुई है, वे अकथ अवस्था को प्राप्त हुए। उनका मन चुप कर गया। वे ईश्वर का रूप हो गए। वे भले हैं, महान् हैं। साहिब रहमत करें इस वाक्य की जो बारीकियाँ हैं, हमारी ज़िन्दगी में उतरें।

कतिकि करम कमावने दोसु न काहू जोगु ॥

आज संग्रांद है, संक्रांति है, सूर्य क्रांति है, सूर्य से जो क्रांति होती है, पलटा होता है, संक्रांति, सूर्य क्रांति।

सूरजु एको रुति अनेक ॥ नानक करते के केते वेस ॥
(अंग १२)

पंजाबी में हम संग्रांद कहते हैं, संस्कृत में कहते हैं संक्रांति और पुराना शब्द है सूर्य-क्रांति। सूर्य करके जो ऋतु बदलती है, दिन बदलते हैं, महीने बदलते हैं, क्रांति तो सूर्य से है। जब मनुष्य को इतना बोध नहीं था तो मनुष्य ने दिन, महीने, गिनती का संबंध चंद्रमा के साथ जोड़ा था। चंद्रमा पूरा हो गया, मास कहते हैं महीने को। पूर्ण मास, महीना पूरा हो गया, पूर्णमाशी महीना पूरा हो गया। कहते हैं एक ब्रह्माण्ड में एक सूर्य होता है, एक चंद्रमा होता है और परमात्मा ने अरबों खरबों ब्रह्माण्ड बनाए हैं और एक ब्रह्माण्ड में 14 लोक होते हैं।

दुइ दीवे चउदह हटनाले ॥ जेते जीअ तेते वणजारे ॥
(अंग ७८९)

एक ब्रह्माण्ड, उसमें दो दीये—सूर्य और चंद्रमा और फिर 14 लोक जहाँ बसे हैं, जीव जन्तु रहते हैं। उनको प्रभावित करते हैं

यह सूर्य और चंद्रमा। इसलिए गिनती का आधार कहीं सूर्य बना है, कहीं चंद्रमा। पैदा करता है, बनाता है सूर्य, रस डालता है चंद्रमा। संक्षेप में अर्ज़ करूँ, मौसम बदलते हैं सूर्य से। भृगु ने यह कहा था अगर तन पर सूर्य और चंद्रमा का असर पड़ता है तो मन पर भी पड़ता होगा। इससे लोगों ने सूर्य और चंद्रमा की पूजा शुरु कर दी। गुरु नानक का ज़माना आया। उन्होंने कहा कि यह कर्ता की कृत हैं। फिर और आगे महां सूर्य है। इसलिए हमें सूर्य और चंद्रमा से नहीं जोड़ा। कहा सुख दुख होता है अपने कर्मों से, चंद्रमा से, सूर्य से नहीं। पहला वाक्य :

किरति करम के वीछुड़े करि किरपा मेलहु राम ॥

खेल तो कर्म का है। आखिरी वाक्य :

माह दिवस मूरत भले जिस कउ नदरि करे ॥

महीने अच्छे हैं, दिन अच्छे हैं, ऋतु अच्छी है, सभी अच्छे हैं, कोई दिन बुरा नहीं। खेल आ गई कर्मों की, ऋतु की नहीं, सूर्य की नहीं, चंद्रमा की नहीं। बारह मास में भी महिमा परमात्मा की है। कृत उस कर्ता की है और कर्ता की प्रशंसा करेंगे कृत को देखकर। कृत महान् है तो कर्ता महान् है। संगीत की धुन महान् है तो संगीतकार आप ही महान् है। कविता बहुत ऊँची है तो कवि बहुत महान् है। कृत बहुत महान् है तो कर्ता बहुत महान् है। परमात्मा महा सूर्यों का सूर्य है, उसने यह सूर्य बनाए। साहिब कार्तिक के महीने का उपदेश देते हैं कि अपने दुख के लिए कभी किसी को दोषी न ठहराओ। यह तेरे कर्मों का दोष है। कर्म बीज हैं, बीज में से ही फल निकलता है। फल बुरा निकला, बीज ठीक नहीं था। दुख निकला, कर्म ठीक नहीं था। दुख सुख फल हैं, कर्म बीज है।

परमेसर ते भुलिआं विआपनि सभे रोगु ॥

अशुभ कर्मों में से एक मूल अशुभ कर्म है, परमात्मा को भूल जाना। क्योंकि जब उसको इन्सान भूल जाता है, फिर कदम-कदम

पर भूलता है। जो परमात्मा को भूला, उसका कुछ भी सही नहीं। परमात्मा जिस की याद में है, उसका कुछ भी गलत नहीं। वह तो परमात्मा का रूप हो जाता है। अगर उसको भूल गया तो सारे शोक संताप उसको घेर लेंगे।

वेमुख होए राम ते लगनि जनम विजोग ॥

परमात्मा से विमुख होते ही अनंत जन्मों का वियोग लग जाता है। जन्म लेता है, मरता रहता है, मिलाप नसीब नहीं होता।

खिन महि कउड़े होइ गए जितड़े माइआ भोग ॥

तुझे भुला कर जितने माया के भोग थे, पदार्थों के रस थे, जो मीठा मानकर सेवन करता रहा, सब कड़वे हो गए, सब दुख रूप में प्रकट हुए। जिनको सुख जानता था, सब दुख होकर सामने प्रकट हुए।

विचु न कोई करि सकै किस थै रोवहि रोज ॥

रोना तो अब रोज़ का है, पर मध्यस्थ कौन बने? अब कौन छुड़ाए? कर्म ही थे, जिन्होंने प्रभु से जोड़ा था। कर्म ही हैं जिन्होंने बिछोड़ कर रख दिया है। इस तरह के कर्म तो किए हैं, अब मध्यस्थ कौन बने, छुड़ाए कौन? दुख तो भोगने पड़ेंगे।

कीता किछु न होवई लिखिआ धुरि संजोग ॥

जो कर्म हम करते हैं, उसका संस्कार बन जाता है।

करि करि करणा लिखि लै जाहु ॥ *(अंग ४)*

जो हम करते हैं, अंदर उसका संस्कार बन जाता है, लिखा जाता है। करना बीज है, बीज दिया है और बीज दिया तो अंकुरित होगा। यह फलीभूत होगा। साहिब यहाँ कहते हैं कि जो दरगाह से लिखा हुआ है, जो प्रभु ने विधान बनाया है, अब इसको कोई मिटा नहीं सकता। इसमें कोई मध्यस्थ नहीं हो सकता। इसमें कोई सहायक नहीं हो सकता।

वडभागी मेरा प्रभू मिलै तां उतरहि सभि बिओग ।।

बड़े भाग्य से जब मेरा प्रभु मुझे मिले तो मेरे सारे दुख दूर हो जाते हैं ।

नानक कउ प्रभ राखि लेहि मेरे साहिब बंदी मोच ।।
कतिक होवै साधसंगु बिनसहि सभे सोच ।। ९ ।।

साहिब के आगे अरदास है कि मुझे अपने चरणों में रख लो । अगर कार्तिक का महीना सत्संग में व्यतीत हो, प्रभु की याद में व्यतीत हो तो सुखों के फल फूल से झोली भर जाती है । जीवन आनन्दमयी हो जाता है । भूल चूक की क्षमा ।

वाहिगुरु जी की खालसा ।। वाहिगुरु जी की फतह ।।

निरमल भए सरीर जन धूरी नाइआ

सलोक ॥

दइआ करणं दुख हरणं उचरणं नाम कीरतनह ॥
दइआल पुरख भगवानह नानक लिपत न माइआ ॥ १ ॥
भाहि बलंदड़ी बुझि गई रखंदड़ो प्रभु आपि ॥
जिनि उपाई मेदनी नानक सो प्रभु जापि ॥ २ ॥
पउड़ी ॥ जा प्रभ भए दइआल न बिआपै माइआ ॥
कोटि अघा गए नास हरि इकु धिआइआ ॥
निरमल भए सरीर जन धूरी नाइआ ॥
मन तन भए संतोख पूरन प्रभु पाइआ ॥
तरे कुटंब संगि लोग कुल सबाइआ ॥ १८ ॥ *(अंग ७०९-१०)*

वाहिगुरु जी की खालसा ॥ वाहिगुरु जी की फतह ॥
सम्मान योग्य गुरु रूप साधसंगत जी !

पावन पवित्र वाक्य गुरु अर्जुन देव जी महाराज पाँचवें गुरु नानक जी का है और वार है जैतसरी की । इन्सान की मूल समस्या है दुख । दुख सिर्फ जीवन में ही नहीं । संसार ही दुख है । जगत ही दुख है । संसार में जीते हुए, संसार में रहते हुए दुख में रहना पड़ेगा । इन्सान का यह ख्याल होता है कि सिर्फ मैं ही दुखी हूँ, जगत तो सुखी है । इसको अज्ञान कहते हैं । ज्ञान का बोध या ऐसे कह लो कि ज्ञान की किरण यहाँ से आरम्भ होती है । क्योंकि जगत दुखी है तो मैं भी दुखी हूँ । संसार दुखी है तो मैं भी दुखी हूँ । यह सही बोध है । यह सही ज्ञान है । अज्ञान मैं दुखी हूँ, जगत तो मौज करता है । मैं रो रहा हूँ, घर में तो हँसी खुशी है । मैं मुरझाया हुआ हूँ, घबराया हुआ हूँ, जगत में तो खुशी ही खुशी है । केवल मैं ही संतापग्रस्त हूँ, बाकी तो आनन्द ही आनन्द है । यह अज्ञान है । मिलते हैं लोग जिनकी मूल समस्या है दुख और अंदर अज्ञान भी है कि हम दुखी हैं । जगत तो मौज करता है ।

दूर क्यों जाऊँ । बड़े से बड़े संत की यात्रा भी धर्म की यहीं से शुरु होती है । फिर एक दिन समझ आती है, जगत् ही दुख है । संसार ही दुख है । यह ज्ञान का दूसरा चरण है । यह ज्ञान की यात्रा अज्ञान से ही होगी । और कहाँ से होगी कि अमुक को ज्ञान हो गया है । इसका मतलब पहले अज्ञान था । अमुक को समझ मिल गई है । इसका मतलब पहले समझ न थी । यह तो कबूल करना पड़ेगा । अमुक घर में तो रोशनी हो गई है । इसका मतलब पहले अंधेरा था । इतना ही कहना पड़ेगा । यह ख्याल मुझे इस श्लोक ने दिया है । गुरु अर्जुन देव जी के पावन श्लोक ने ।

दइआ करणं दुख हरणं ।।

मूल समस्या दुख है । बाबा फरीद कहते हैं कि यह नासमझी है या दूसरे शब्दों में कह दें कि यह अज्ञान बाबा फरीद कहते हैं, मुझे भी था । मैं भी ऐसा ही समझता था ।

फरीदा मै जानिआ दुखु मुझ कू दुखु सबाइऐ जगि ।।

(अंग १३८२)

मैं तो इस तरह ही समझता था कि बस मैं ही दुखी हूँ । फरीद की तरह यह पहली अवस्था सभी के पास होती है । फरीद की तरह दूसरी तरह की अवस्था कोई करोड़ों में से किसी एक के पास होती है । कोई माने चाहे न माने । इसलिए हर एक के पास से गिला सुनोगे, मैं दुखी हूँ । और जिस तरह मैं दुखी हूँ, कोई भी दुखी नहीं । और अगर किसी को कह दे जगत ही दुखी है । वह सोचता है इसने संतुष्टि नहीं कराई । अब तो मुझे इस तरह बहुत लोग कहना हट गए हैं, क्योंकि मैं उनकी संतुष्टि नहीं कराता क्योंकि जब मुझे कोई कहता है कि मैं बहुत दुखी हूँ तो मैं कह देता हूँ कि जगत ही दुखी है । अगर तू दुखी है तो कौन-सी नई बात हो गई । तेरे पास दुख है तो कौन-सी बड़ी बात हो गई । जगत ही दुखी है । वे उपाय ढंग पूछते हैं और मैं कहता हूँ कि जितनी देर तक जीवन है, जितनी देर तक संसार में हो, संसारी हो, दुख ही है । साधारण लोग तो संतुष्टि चाहते हैं, हिम्मत चाहते हैं । झूठी हिम्मत देने की मेरी आदत नहीं, बस इतनी बात है । आदत ही नहीं । बाबा फरीद कहते हैं :

फरीदा मै जानिआ दुखु मुझ कू

ऐसे कह लें कि बाबा फरीद जी, आपने क्या जाना, पूरा जगत ही दुखी है । परमानन्द परमात्मा की यात्रा तो इस ज्ञान से शुरु होती है । इसको चाहे अज्ञान कह लो । मैं दुखी हूँ । मैं दुखी हूँ तो धर्म के मार्ग पर यात्रा नहीं हो सकती । मैं दुखी नहीं हूँ, यह इतना अज्ञानी है कि इसको अपने दुख का भी नहीं पता, सुख का भी खाक पता होगा । यह तो इतना अज्ञानी है, पत्थर के टुकड़े-टुकड़े कर दिए जाएँ । तोड़ा जा रहा है । है तो दुखी पर क्योंकि उसके पास बोध नहीं, समझ नहीं तो कई बिल्कुल पत्थर होते हैं ।

इन पत्थरों में से पूर्ण पत्थर एक पुरुष मुगल सम्राट बाबर, जो कहता है दुनिया बहुत रंगीन है । कौन कहता है बेरंग है । दुनिया बहुत रसदायक है । कौन कहता है बेरस है । दुनिया में बहुत स्वप्न हैं । कौन कहता है बदसूरती है । जिसको आलम में, जगत में सुख दिखाई देता है, वह अचेत है और अचेत आदमी लोभी होगा । कहते हैं कि मनुष्य दो तरीकों से विकसित होता है, कोई बाहर से कोई अंदर से । और कोई अंदर से बाहर से दोनों पक्षों से । कोई लोक के तल पर विकसित होता है । कोई परलोक के तल पर विकसित होता है । कोई लोक परलोक दोनों तलों पर विकसित होता है ।

एक उदाहरण दूँ । क्योंकि प्यास तो संत को भी लगती है । पक्षी को भी लगती है । पशु को भी लगती है । मूर्ख को भी लगती है । तो पानी तो बाहर से ही मिलेगा । और कहाँ से मिलेगा । बर्हिमुखी की निंदा नहीं है । बर्हिमुखी की उस वक्त निंदा है जब वह कह दे सब कुछ बाहर ही बाहर है । अंदर कुछ भी नहीं है । यह लोभी मनुष्य की पहचान है । लोभ बैठने नहीं देता । लोभ दौड़ाता है, भगाता है । इतना दौड़ाता है, इतना भगाता है कि लोभी कह सकता है कि मेरे पास तो रोटी खाने का भी वक्त नहीं और भागदौड़ तो रोटी के लिए थी । मेरे पास आराम करने का भी वक्त नहीं । यह भागदौड़ तो सारी आराम करने के लिए थी । बाहर का सारा विकास लोभ पर खड़ा है । अंदर का सारा विकास संतोष पर खड़ा है ।

उस मनुष्य की गति नहीं हो सकती जो संतुष्ट नहीं है, तो क्या संतुष्ट बाहर से विकसित नहीं होता ? ऐसा नहीं है । संतुष्ट से भाव है उद्यम तो मैं करूँगा । जरूरतें तो मेरी भी हैं । सफलता मिल गई तो प्रभु तेरा धन्यवाद, सफलता नहीं मिली तो भी तेरा धन्यवाद । क्योंकि उस

असफलता के बीच भी तूने शायद मेरे लिए सफलता लिखी है पर मुझे दिखाई नहीं देती। बस इतनी बात है। असफलता के कारण जो दुखी हो गया, बस वही संसारी है। जो मैंने चाहा था हुआ नहीं तो मैं दुखी हूँ। यह कौन बताए, इतना बड़ा ब्रह्माण्ड तेरी चाहत से नहीं चल रहा। किसी की चाहत से चल रहा है। उसकी चाहत, उसकी मर्जी से शरीर में खून चल रहा है। शरीर में साँसें चल रही हैं। दिल धड़क रहा है। इतना जरूरी काम और अहम काम। दिल की धड़कन बंद हो जाए, गए। साँसों की हरकत बंद हो जाए, गए। खून की हरकत बंद हो जाए, खत्म। इतना ज़रूरी काम परमात्मा ने अपने हाथ में लिया है। बहुत कुछ तेरे लिए हो जाएगा। उसकी चाहत है, क्योंकि उसकी चाहत से खून चल रहा है, साँसें चल रही हैं, दिल धड़क रहा है। यह चाहत उसकी है, पर इतनी सूझ बूझ हो। भक्त को अंदर से कोई जरूरत महसूस हुई है। यह सोचता है, पूरी हो जाए। हो गई पूरी, तो भी ठीक। नहीं हुई पूरी तो भी ठीक। आखिर साहिब कहते हैं कि कई बार जरूरत उसके अंदर महसूस नहीं होती, हो सकती है और अभी उसको महसूस नहीं हुई। परन्तु प्रभु पूरी कर देता है। बहुत कीमती पंक्ति है :

अचिंत कंम करहि प्रभ तिन के जिन हरि का नामु पिआरा ॥

(अंग ६३८)

मूल बात यहाँ है अचिंत। अभी तो चिंता भी नहीं थी कि यह हो। अभी तो फिक्र भी नहीं लगाई थी। अभी तो इसने चाहा भी नहीं था। अभी तो इसके अंदर याद भी नहीं थी। अभी तो इसने सोचा भी नहीं था, पर हो गया।

अचिंत कंम करहि प्रभ तिन के

प्रभु को पता है कि यह इसकी जरूरत हो सकती है, आज नहीं तो कल। यह इसकी चाहत हो सकती है, आज नहीं तो कल। यह इसकी माँग हो सकती है, आज नहीं तो कल। और इसलिए यह सहायता हो सकती है, आज नहीं तो कल। चाहत तो अभी पूरी नहीं हुई पर हो गया है काम। इसी को महाराज कहते हैं :

अचिंत कंम करहि प्रभ तिन के

ख्वाब-ख्याल में भी नहीं था। काम हो गया और जब काम हो गया और ख्वाब आया कि यह आज नहीं तो कल मेरे अंदर ख्याल पैदा हो सकता था कि काम हो। आज तो नही, पर कल हो सकता था। काम हो जाने के बाद ख्याल आता है। संसारी के अंदर पहले चाहत है कि यह काम होना ही चाहिए। हो गया है तो पैर ज़मीन पर नहीं टिकते। नहीं हुआ तो वहीं बैठ गया है। बस इतनी बात है। अंदर से बाहर से विकसित होता है भक्त भी, पर अकस्मात्।

अचिंत कंम करहि प्रभ तिन के

जैसे उसका बाहर से विकास होना अकस्मात् है, उसका अंदर से विकास होना भी अकस्मात् है।

घाल न मिलिओ सेव न मिलिओ मिलिओ आइ अचिंता ॥

(अंग ६७२)

फिर अचिंता। अचिंत परमात्मा मिल गया है। अचिंत पदार्थ मिल गया है। अचिंत धर्म मिल गया है। अचिंत धन मिल गया है। अचिंत प्रभु मिल गया है। अचिंत प्रभुता मिल गई है। चिंता नहीं है। जैसे अब कोई वाहिगुरु-वाहिगुरु जपने लगे तो चिंता का उभार यह हो कि मन जुड़ना ही चाहिए। नहीं जुड़ेगा, क्योंकि मन तो चिंता में है। जुड़े न जुड़े प्रभु तेरी मर्जी। कोई चिंता नहीं। हमने वाहिगुरु वाहिगुरु जपना है जुड़े न जुड़े तेरी मर्जी। हम नहीं चिंता करते। हमने तो बाणी पढ़नी है।

अचिंत कंम करहि प्रभ तिन के जिन हरि का नामु पिआरा ॥

अकस्मात् प्रभु मिल गया। अकस्मात् परमानन्द मिल गया। अकस्मात् दुनियावी सुख मिल गए। सब कुछ अचिंत हो रहा है। अंदर का विकास, बाहर का विकास। चिंता करके जिसका हो रहा है तो चिंता करके बैरूनी विकास तो हो सकता है। अंदर का विकास नहीं होगा, कंगाल रह जाएगा। इसलिए मैं अर्ज करूँ, लोभी बाहर से तो विकसित होते हैं। अमेरिका, वहाँ अभी धर्म कर्म तो है नहीं, पर बहुत विकासशील देश हो गया है। बैरूनी बहुत सुविधाएँ हैं। लोभ मनुष्य को बाहर से विकसित करता है, मदद करता है पर लोभी दुखी जरूर होगा। क्यों ? दो काम उसके बनेंगे। दो बिगड़ेंगे। दो काम पूरे होंगे, चार नहीं होंगे।

तो हँसता भी रहेगा, रोता भी रहेगा। सुखी भी रहेगा, दुखी भी रहेगा। इसको कहते हैं :

दुख सुख करत जनमि फुनि मूआ ।।

कभी सुखी, कभी दुखी। आखिर मर गया। कभी हँसा, कभी रोया।

दुख सुख करत जनमि फुनि मूआ ।।
चरन कमल गुरि आस्रमु दीआ ।। *(अंग ८०४)*

मैं पुनः अर्ज करूँ, अचिंत एक अवस्था है। अचिंत से मुराद कहीं आलसी न ले लेना, क्योंकि अचिंत मनुष्य कुछ करेगा नहीं, बहुत कुछ करेगा, पर अंदर यह चाहत नहीं कि यह हो, उद्यम है उसका। कर्म है उसका। इसको गुरु अर्जुन देव जी कहते हैं :

करम करत होवै निहकरम ।।
तिसु बैसनो का निरमल धरम ।। *(अंग २७४)*

कर्म तो बहुत करता है, पर कर्तापन हटा लेता है। मैंने किया, मैंने किया। तो मैंने किया तो फल मुझे मिलेगा। फल नहीं मिला तो दुखी। ऐसा मनुष्य एक भी ढूँढना मुश्किल है। जिसके सभी काम पूरे होते हों, नहीं, कुछ पूरे होते हैं, कुछ बिगड़ते हैं। कुछ होते हैं, कुछ नहीं होते। मेरी चाहत से जगत नहीं चल रहा। प्रभु की चाहत से चल रहा है। भिखारी ही दुखी नहीं, राजा भी दुखी है। गुलाम ही दुखी नहीं, हुक्मरान भी दुखी है। नौकर ही दुखी नहीं, मालिक भी दुखी है। दुख व्यापक है। बड़े से बड़ा संत भी अगर उसकी आदि अवस्था ढूँढो तो अज्ञान है। आखिरी अवस्था ढूँढोगे तो ज्ञान है। अगर 80 साल का एक बूढ़ा देखते हो, वह बहुत समझदार है। उसके पास बहुत अनुभव है। बहुत तजुर्बे हैं, पर मानना तो पड़ेगा कि यह भी उस अवस्था में से निकलता है। जब अपने पैर का अंगूठा आप चूसता था, कुछ समझ नहीं थी। अभी अपना बोध नहीं था।

आप सुनकर हैरान होंगे कि मनोविज्ञान तो आज सहमत हुआ है, धर्म कहता है कि बच्चे को पहले तू का पता होता है, अपना नहीं। सामने दिखाई देते हैं माँ, बाप, दीवार, तस्वीर देखता है। अभी अपना आप देखने

में तो असमर्थ है । अभी अपने आप को समझने में असमर्थ है । कहते हैं तू का जन्म पहले होता है । यह है, यह है । अभी अपना बोध कोई नहीं । मैं नहीं है । शायद बच्चा भगवान जैसा दिखाई देता है, इसलिए । बोध तू का है, मैं तो है ही नहीं । धीरे-धीरे पता चलता है कि माँ किसी वक्त होती है, किसी वक्त नहीं होती और बच्चे की शुरु-शुरु में एक ही इन्द्रिय विकसित होती है ज़ुबान, बाकी कुछ भी नहीं । क्योंकि मुँह में से स्तन डाला है, दूध पीता है । अब हर चीज जो उसको मिलेगी, मुँह में डालेगा । अगर उसके हाथ चल पड़े तो एक ही इन्द्रिय विकसित हुई है । अभी उसके कान विकसित नहीं हुए ।

तानसैन भी गाता है तो कुछ भी नहीं । अभी इसकी आँखें विकसित नहीं हुईं । बहुत महान् रंग रूप की प्रदर्शनी भी हो, कुछ भी नहीं । और उसकी नासिका विकसित नहीं हुई । महान् सुगन्धियों का ढेर भी लग जाए तो कुछ भी नहीं । अभी इसकी स्पर्श इन्द्रिय विकसित नहीं हुई । कुछ भी छुए, अभी कुछ भी नहीं । एक ही इन्द्रिय विकसित हुई है । रसना, ज़ुबान । बाकी सभी इन्द्रियाँ सोई हैं । अचेत हैं । जागेंगी पर अभी नहीं । अभी तो एक ही इन्द्रिय का बोध है । शुरु से ही खुराक मुँह में डाली है । मुँह को दूध का स्वाद आया है बस इतना ही और अब हर चीज को दूध समझ कर मुँह में डालेगा । अगर चींटी भी इसने ज़मीन पर रेंगती हुई देख ली, इसने उठा कर मुँह में डाल लेनी है । सब कुछ मुँह में डालेगा । धीरे-धीरे किसी दिन आँखों का रस भी विकसित होगा । कानों का भी विकसित होगा । नासिका का भी और त्वचा का भी ।

धर्म प्राचीन काल से कह रहा है कि बाल-बुद्धि अचेत । वह अचेत है । अपने आप से अचेत है । धीरे-धीरे साल-छह महीने का होता हुआ अब सिर्फ तू नहीं, मैं भी हूँ और एक दिन ऐसा भी आएगा कि 'मैं' बहुत बड़ा हो जाएगा । 'तू' बिल्कुल छोटा हो जाएगा । जवान हो गया तो माँ क्या है ? कुछ भी नहीं । नजरअंदाज़ करेगा । पिता क्या है ? कुछ भी नहीं । यह भाई व पड़ोसी क्या हैं ? कुछ भी नहीं । 'मैं' इतना बड़ा होता जाएगा । गुरु क्या है ? कुछ भी नहीं । यह धार्मिक सब क्या है ? कुछ भी नहीं । यह कथा कीर्तन क्या है ? कुछ भी नहीं । ऐसे बेकारों का झुण्ड है । इतना अहंकार विकसित हो जाएगा । अगर 'मैं' शिखर पर पहुँच

गई तो एक दिन कह देगा कि क्या होता है भगवान। कुछ भी नहीं है।

हिरण्यकशिपु ने कह ही दिया था। नमरूद ने कह ही दिया था। पता नहीं कितने हिरण्यकशिपुयों से यह धरती आज भी भरी पड़ी है। जितना शक्तिशाली होता गया, 'मैं' बढ़ता गया। अगर कोई उसको बोध भी कराना चाहे परमात्मा का तो नहीं करेगा। कारण ? एक अहंकारी इन्सान जो कुछ करना चाहता है, अगर वह निरंकार को सामने रखे तो कर नहीं सकेगा।

मार दिए हैं भाई औरंगज़ेब ने अपने तीनों। बूढ़े बाप को जेल में डाल दिया है। बड़ी बहन जहांआरा बाप का पक्ष लेकर आई। दूसरे भाई दारा का पक्ष लेती थी। उसको भी चोटी से पकड़ कर किले में कैद कर दिया। यह वही कर सकता है जो भगवान को एक तरफ रखे। मैं हूँ, भगवान क्या होता है ? कुछ भी नहीं। एक दुष्ट आदमी, एक ज़ालिम इन्सान, एक अहंकारी इन्सान, एक लोभी इन्सान जो कुछ करना चाहता है तो परमात्मा को एक तरफ करेगा। अगर वह शक्तिशाली है, ताकतवर है। इसलिए ताकतवर मनुष्य आस्तिक नहीं होते। राजाओं में बहुत कम राजा जो धार्मिक हैं। कभी कभार कोई जनक।

कितने राजा हुए हैं इस देश में, पर जनक जैसा ढूँढना मुश्किल है। सिख जगत में कितने राजा हुए पर महाराजा रणजीत सिंघ जैसा तो एक ही है और तो है नहीं। राजा तो बहुत हैं, राजा की पदवी आज भी लिए घूमते हैं। महाराजा जींद, महाराजा कपूरथला, महाराजा पटियाला, महाराजा नाभा, पर महाराजा रणजीत सिंघ जैसा एक भी नहीं। कितने रजवाड़े थे इस देश में, हज़ारों हो गुज़रे, कितने हुक्मरान बने हुए हैं पर जनक जैसा तो एक भी नहीं।

परमात्मा को एक तरफ करना क्या है ? बस सिर्फ भुला देना। नहीं मानते। सूरत को एक तरफ करना क्या है ? सिर्फ आँखें बंद कर लीं। बस खत्म। अंधेरा ही अंधेरा। इतनी बात।

'मैं' का बोध बहुत बाद में होता है बच्चे को और जिस दिन 'मैं' का बोध बढ़ना शुरु होता है, उस दिन ऐसे कह लो बचपन की पवित्रता नष्ट हो जाती है। वह जो बच्चा भगवान जैसा दिखाई देगा, अब तरह-तरह शरारतें करेगा। बहुत कुछ नुक्सान भी करेगा। बहुत उपद्रव भी करेगा। बहुत कुछ करेगा। परमात्मा परम आनन्द की यात्रा इस बोध से

होती है । क्या ? जगत् दुख है । हाथ में गुटका भी होगा, अपने दुख को भी रोएगा । कथा भी सुनने आया पर अपने दुखों को रोता रहा । कीर्तन भी सुनने आया, पर अपने दुखों को ही याद करता रहा । किसी से बातचीत भी करेगा पर अपने दुखों की करेगा । और कुछ भी नहीं । इसके अलावा और कुछ भी नहीं ।

शहर बदल ले, दुख नहीं बदलता । मुल्क बदल ले, दुख नहीं बदलता । परिवार बदल ले, दुख नहीं बदलता । मित्र दोस्त बदल ले, दुख नहीं बदलता । फैशन बदल ले, दुख नहीं बदलता । खाना पीना बदल ले, दुख नहीं बदलता । दुख तो अपने स्थान पर ही है । इन्सान सोचे कि इस शहर में दुख है यह शहर बदल लेते हैं । उस शहर में भी दुख होगा, वहाँ भी होगा । कईयों को यह ख्याल होता है कि चलो मज़हब बदल लें । हिन्दू हैं तो मुसलमान हो जाएँ । मुसलमान हैं तो क्रिश्चियन हो जाएँ । बहुत क्रिश्चियन ऐसे बन रहे हैं । क्रिश्चियन है तो यहूदी हो जाएँ । यहूदी हैं तो बौद्धि हो जाएँ । मज़हब के बदलने से भी दुख नहीं बदलता या तो कह लें सभी हिन्दू सुखी हैं । सभी सिख सुखी हैं । सभी मुसलमान सुखी हैं या ऐसे कहना पड़ेगा कि कोई-कोई सुखी है । सभी रोते हैं । कुछ भी नहीं है । सब रो रहे हैं । सब दुखी हैं । गुरु नानक ने कहा है :

बाली रोवै नाहि भतारु ।। नानक दुखीआ सभु संसारु ।।

(अंग ९५४)

यह ज्ञान है । बाबा फरीद जी कहते हैं कि आज समझ आ गई है कि सभी दुखी हैं । किस तरह समझ आ गई ।

ऊचै चड़ि कै देखिआ तां घरि घरि एहा अगि ।।

(अंग १३८२)

आज सुरति ऊँची हुई । आज समझ ऊँची हुई और पता चला कि दुखों की आग घर-घर में जल रही है । एक भी घर ऐसा नहीं जहाँ दुखों की आग नहीं जलती । सभी दुखी हैं । बाबर कहता है कि ऐश कर, आनन्द ले । जगत आनन्द है । जगत रंग है । जगत रूप है । जगत रस है । ऐसे कह लो कि जो मूर्खों का महा मूर्ख है । वह ही कह सकता है कि जगत बड़ा आनन्द है । गुरु नानक कहते हैं :

नानक दुखीआ सभु संसारु ।।

सारा संसार दुखी है ।

दुख कीआ पंडा खुल्हीआ सुखु न निकलिओ कोइ ।।

(अंग १२४०)

हर आदमी दुखों से बंधी हुई एक गठरी है । ज़रा खोलें तो दुख ही दुख निकलते हैं । मैं अक्सर अर्ज़ करता हूँ कि पता है दूसरे को खोलने का ढंग क्या है ? एक ही ढंग है । बस अपना एक दुख सुनाओ और दूसरे ने गठरी खोल देनी है । उसने अपने 100 दुख सुनाने हैं । चुप ही नहीं करेगा । आप कहो मुझे ज़ुकाम है । वह कैंसर से नीचे की बात भी नहीं करेगा । आप कहो मेरा माथा दुखता है । उसने कहना है मेरा तो रोम-रोम ही दुखता है । आप एक दुख सुनाओ, उसने हज़ार दुख सुनाने हैं । इसलिए ज्ञानी लोग, जिन को पता है कि यह संसार दुख है, कभी भी अपने दुख का जिक्र उनके आगे नहीं करेंगे, क्योंकि पता है कि संसार ही दुख है । एक उर्दू का महान् शायर उस्ताद ज़ौक कहता है :

मेरे चेहरे पर गम आशकारा नहीं है ।

मैंने कभी भी माथे पर दुख को प्रकट नहीं होने दिया ।

मेरे चेहरे पर गम आशकारा नहीं है ।
पर यह न समझ कि यह गम का मारा नहीं है ।

यह न समझ कि मैं दुखी नहीं हूँ । दुखी हूँ, पर मैंने कभी कहा नहीं है किसी को ।

मेरे चेहरे पर गम आशकारा नहीं है ।
पर यह न समझ कि यह गम का मारा नहीं है ।
डूबने को तो डूबे हम भी लेकिन,
पहले साहिल को हम ने पुकारा नहीं है ।

कहता है दुखों के सागर में मैंने भी गोते खाए हैं । डूबा मैं भी हूँ, पर मैं ऐसा चीखा-चिल्लाया नहीं कि मैं डूब गया जी ! मैं मर गया जी ! यह रोना-धोना मैंने नहीं किया । क्यों ? सभी डूबते हैं । सभी गर्क होते हैं । सारे ही डूब रहे हैं और डूब लगाने वालों के आगे मैंने कहा कि मैं

डूब रहा हूँ, मूर्खता नहीं तो और क्या है ? दुखी इन्सानों के आगे अपने दुख रखने, यह कोई ज्ञान की बात नहीं । मैं अपने दुखों की गठरी किस के आगे खोलूँ ? दूसरा पहले ही खोल कर रख देगा । समझदार आदमी नहीं खोलता ।

नानक दुखीआ सभु संसारु ।।

यह ज्ञान का पहला चरण है, पहली अवस्था है । ज्ञान की चार अवस्था मानते हैं । ज्ञान की दूसरी अवस्था अगर दुख है तो फिर दुख का कारण भी है । ऐसे नहीं है । यह ज्ञान का दूसरा चरण है । ज्ञान का पहला चरण दुख है । यह हँसते हुए चेहरे का पता नहीं कितना रोना छुपाए बैठे हैं । यह चिकना माथा पता नहीं कितना रंग रूप छुपाए बैठा है । कितना मुरझाना छुपाए बैठे हैं । यह रंग रूप से संवरे हुए मनुष्य पता नहीं अपने अंदर कितनी बदरंगी छुपाए बैठे हैं । यह पहला बोध है कि मैं दुखी नहीं हूँ, संसार भी दुखी है । जिसको इतनी समझ आ जाए कि जगत ही दुख है तो यह किसी के साथ सुख की तलाश का रिश्ता नहीं जोड़ेगा । उसको पता है कि जिससे मैं सुख माँग रहा हूँ, वह मुझसे माँगता है । यह तो इस तरह अदला-बदली होगी और दे एक भी नहीं सकेगा । कौन-से माँ-बाप बच्चों को सुख दे सके हैं और कौन-से बच्चे माँ-बाप को सुखी कर सके हैं । सब रोते मिलेंगे अगर दुख का कारण है तो फिर निवृत्ति का साधन भी है । ऐसे नहीं है । अगर बीमारी का कारण है । बिना कारण से बीमारी नहीं तो बीमारी को दूर करने का इलाज भी है । औषधि भी है ।

जितने पाखण्डी गुरु पंजाब में हैं, और कहीं भी नहीं हैं । सरेआम गुरु ग्रंथ साहिब से तोड़ रहे हैं और अपने से जोड़ रहे हैं । मूर्ख अपने आप को कह रहे हैं कि हम भगवान हैं, हम ही गुरु हैं तो मूर्खों का अक्सर बढ़ावा वहाँ ही होता है जहाँ मानने वाले भी मूर्ख हों । मेरा सिख भूल कर भी कभी कब्र को माथा न टेके । मकबरे को माथा न टेके । हर खेत में कब्रें उग आई हैं, मशरूम की तरह । मेले लग गए । चादरें चढ़ाने लग गए हैं सिख ।

गत वर्ष मैं टैक्सी पर जालंधर गया । पता नहीं रास्ते में कब्र थी । उस ड्राईवर ने गाड़ी रोकी । मैंने कहा गाड़ी क्यों रोकी है, कोई काम

है ? मैंने जल्दी जाना है । कहता है नहीं ज्ञानी जी, मैं माथा टेक आऊँ । अगर न टेकूँ तो दुर्घटना हो जाती है । गुरु का सिख, खुली दाढ़ी, नीली पगड़ी और मैंने कहा ड्राईवर तो बहुत गुरमुख मिला है । अच्छी टैक्सी आई । गुरु की बातें । यह तो कब्र की बातें । कब्र की पूजा । यकीन मानो, इस तरह के कब्रों के पुजारी, चादर चढ़ाने वाले पंजाब से बाहर सिख नहीं मिलते । यहाँ सारा अनर्थ पैदा हो गया । दूर क्यों जाऊँ, अब संतों की भी कब्र और संतों की भी कब्रों को माथा टेको । मुसलमानों के पीरों फकीरों की तो कब्र छोड़ो, अब सिखों के संत, उनकी भी कब्रें हैं । जो भस्म हो गया, अब उसकी भी पूजा करो । जो नूर हो गया, उसकी पूजा करो । तन की पूजा करो । तन भस्म हो गया है और भस्म की पूजा करने वाला नूर हो सकेगा । खाक की पूजा करने वाला, नूर हो सकेगा ? यह ज्ञान का चौथा चरण है । ज्ञान संपूर्ण हो गया । सुख है । जगत् दुख नहीं । जगत् सुख है । आप हैरान होंगे, यात्रा कहाँ से आरम्भ हुई, संपूर्ण कहाँ हुई ?

नानक दुखीआ सभु संसारु ॥

यात्रा तो यहाँ से आरम्भ हुई ।

दुखु नाही सभु सुखु ही है रे.....॥ *(अंग १३०२)*

गुरु ग्रंथ साहिब में पाँचवें गुरु नानक गुरु अर्जुन देव जी फुरमाते हैं :

दुखु नाही सभु सुखु ही है रे एकै एकी नेतै ॥
बुरा नही सभु भला ही है रे हार नही सभ जेतै ॥

(अंग १३०२)

कौन कहता है जगत में कोई बुरा है । कुछ भी नहीं है । सब भला है । कौन कहता है जगत में दुख है । सुख ही सुख है और अगर गुरु अर्जुन देव जी को कह दें कि आप अपनी पहली ज्योति में कह रहे हो-

नानक दुखीआ सभु संसारु ॥

दुख ही दुख है और अब कहते हो सुख ही सुख है ।

दुखु नाही

कौन कहता है दुख है ।

सभु सुखु ही है रे

सब सुख ही सुख है । सब आनन्द ही आनन्द है । सब खुशी ही खुशी है । सब रस ही रस है । कौन कहता है बेरस है ।

दुखु नाही सभु सुखु ही है रे एकै एकी नेतै ।।

कौन कहता है हार गए हैं । सब जीत ही जीत है ।

बुरा नहीं सभु भला ही है रे ।।

कौन कहता है यह बुरा हो गया है । बच्चा जवान हो गया है तो खुद भी कहता है, अच्छा हुआ है । माँ–बाप भी कहते हैं अच्छा हुआ बच्चा जवान हो गया, पर अगर अब बूढ़ा हो रहा है और कहता है कि बुरा हो रहा है । यह भला हो रहा है । यह बुरा हो रहा है, अज्ञान है । जो कुछ हो रहा है, सब भला हो रहा है । कुछ भी बुरा नहीं । जन्म हो गया बच्चे का, बधाई । अर्थी निकल रही है, रोना–धोना, बुरा हो गया । नफा हो गया, बहुत भला हो गया । नुक्सान हो गया है, रोना । यह बुरा हो गया । सिंघासन पर बैठे हो, भला है और गर्म तवी पर बैठ कर कोई कहे, बुरा है । नहीं, गर्म तवी पर बैठ कर वह कह रहे हैं :

आगिआ महि भूख सोई करि सूखा सोग हरख नही जानिओ ।।
जो जो हुकमु भइओ साहिब का सो माथै ले मानिओ ।।

(अंग १०००)

उसका हुक्म है, सब ठीक है । कुछ भी बुरा नहीं ।

बुरा नही सभु भला ही है रे हार नही सभ जेतै ।।

यह परमानन्द की यात्रा दुख के बोध से होगी । संसार दुख है । इसका क्या कारण है ? कारण अज्ञान है । अगर कारण है दुख का तो निवृत्ति का साधन भी है । क्या ? ज्ञान । ज्ञान के मिलते ही दुख का नाश हो गया । ज्ञान तो प्रकाश है । भटकन मिट गई । ब्रह्मज्ञानी को दुखी करना बहुत मुश्किल है । अगर दुखी हो जाए तो ब्रह्मज्ञानी नहीं । छोटी–छोटी बात पर आदमी आपे से बाहर हो जाता है । वैसे उनके साथ पदवी ब्रह्मज्ञानी की भी जुड़ी होती है । छोटी–छोटी बात पर क्रोधित हो जाते हैं । वैसे ब्रह्मज्ञानी हैं । छोटी–छोटी बात पर बदले की भावना से भर जाते हैं, वैसे ब्रह्मज्ञानी भी हैं । नहीं, दुख है । यह सारा दुख नाश हो जाता है । मिट जाता है, जहाँ ज्ञान प्रकाश हो जाए और ज्ञान प्रकाश कहाँ हो जाता है,

जहाँ मनुष्य प्रभु की दया का पात्र बन जाए। उसकी दया हर वक्त बरस रही है। जैसे सूर्य हर वक्त रोशनी दे रहा है, पर अगर मैं हर वक्त आँखें बंद कर लूँ तो सूर्य क्या करेगा ? मैंने अपनी आँखें ही बंद कर ली हैं और मैं कहता हूँ कि रोशनी चाहिए। रोशनी चाहिए। आँखें खोलने के लिए मैं तैयार नहीं।

मनुष्य दुखी है, अपने ही अज्ञान के कारण, नहीं तो मनुष्य को दुखी करना बहुत मुश्किल है। अगर ज्ञानवान ब्रह्मज्ञानी मुफलिस भी है तो आनन्द के बीच है। अज्ञानी करोड़पति है तो भी रोता रहेगा। जेल की तंग कोठड़ी में भी ब्रह्मज्ञानी आनन्दमयी है। अज्ञानी सिंघासन पर बैठा भी रोता रहेगा। ज्ञान अज्ञान मन की अवस्था है, दुख और आनन्द मन की एक हालत है, इसलिए कहते हैं कि ब्रह्मज्ञानी को दुखी करना बहुत मुश्किल है। उसको ज्ञान हो गया है। उसको समझ आ गई है। उसको पूर्ण बोध हो गया है। प्रभु की दया का ऐसा पात्र बना है और जब दया का पात्र बना है तो उसकी पात्रता में दया ही दया है। जिसका पात्र दया से भर गया है लबालब तो उसके पात्र से दया ही निकलेगी। जब वह प्रभु की दया का पात्र बन गया तो आनन्द ही आनन्द है। जिसके पास सुख ही सुख हो,क्या वह किसी को दुख देगा ? जो चीज मेरे पास होगी, मैं वही दे सकता हूँ। मैं दुखी हूँ तो दूसरों का दुख ही दूँगा। और क्या करूँगा ?

इस संबंध में एक छोटी-सी गाथा मुझे याद आई। कश्मीर में एक अतार नाम का फकीर था, पर था मुफलिस। गरीब था, गृहस्थी था। छोटी-सी गृहस्थी थी। घर में दोनों बस पति-पत्नी थे। पत्नी चने उबाल देती थी और पति साथ मसाले रख कर बाज़ार में बेचता था। भगवान के भक्त भोले होते हैं। भोले से भाव मूर्ख नहीं, भावना से भरे हुए, भरोसे से भरे हुए, विश्वास से भरे हुए। कहते हैं चालाक आदमी को ठगना बहुत मुश्किल है और भोले इन्सान का किसी को ठगना बहुत मुश्किल है। किसी को ठग नहीं सकता। चालाक इन्सान ठगा नहीं जा सकता। भोला ठग नहीं सकता। यह हकीकत है। एक इन्सान के पास खोटा सिक्का था। कहीं न चला। सोचता है कि यह फकीर खोंचा लेकर चने बेचता है। देखते हैं शायद यह चल जाए। उसने खोटा सिक्का फकीर की हथेली पर रखा, कहा चने दे। फकीर ने देख लिया सिक्का खोटा

है । कहीं नहीं चला सभी ने वापिस किया है । पर उसने अपनी हथेली पर रख लिया । सिक्का खोटा ले लिया, सौदा खरा दे दिया ।

अक्सर ऐसा होता है, लोग सिक्के खरे ले लेते हैं और सौदा खोटा ही देते हैं । बिल्कुल विपरीत बात । अर्थ शास्त्र का एक नियम है, अगर जेब में खोटा सिक्का है और बाकी सही हैं तो मनुष्य पहले खोटे सिक्के को चलाने की कोशिश करता है । वो जो सही हैं वे तो चल ही जाएँगे । पहले फटा हुआ, टूटा हुआ, पुराना ही नोट चलेगा, यह अर्थ शास्त्र का नियम है । जिसका खोटा सिक्का चल जाए और हो लोभी तो बहुत खुश होता है । बड़ा खुश हुआ चने लेकर । खाए, बहुत स्वाद । उसने कहीं दो-चार आदमियों को बताया होगा । बात फैल गई । अब खोटा सिक्का जिसका कहीं भी न चले, अतार के पास आकर चलाता था । यहाँ देना और ले लेने चने ।

धीरे-धीरे क्या होता गया । बेचारा मुफलिस था, कोई बहुत धनवान तो था नहीं । घर में खोटे सिक्के बढ़ते गए, क्योंकि वे चलने से बाहर थे । आज ऐसी नौबत आई । फजर की नमाज़ पढ़कर, रोज़ की इबादत से फुर्सत लेकर जब अतार ने पत्नी को कहा, खोंचा तैयार है । उसने कहा नहीं । आज फिर देर क्यों कर दी ? खोटे सिक्कों की थैली आगे रख दी, कहा, मैं लेकर गई हूँ, न किसी ने नमक दिया, न किसी ने मसाला । न किसी ने चने । यह सिक्के सभी ने वापिस कर दिए हैं । तो मैं तैयार कहाँ से करती खोंचा । यह कोई भी नहीं लेता ।

बात समझ में आई फकीर के । हथेली में उठाई थैली । हाथ जोड़ कर प्रार्थना करता है—हे खुदा ! मैं इन खोटे सिक्कों को कबूल करता रहा, तूने जो मेरे हृदय में दया डाल दी है । क्योंकि तू दयालु है । मेरा हृदय भर दिया है । खोटे सिक्कों को वापिस करने की मेरी हिम्मत नहीं हुई । यह कितने घरों से, कितनी दुकानों से ठुकराया गया है, इसको ठोकर मारने की मेरी हिम्मत नहीं । मैं रखता ही गया, पर हे खुदा ! एक विनती और है, यह खोटा सिक्का जब तेरे दर पर आए तो तू भी कबूल कर ले । मैं तेरे इन्सानों के खोटे सिक्के कबूल करता रहा हूँ, तू खोटे इन्सानों को कबूल कर ले । ऐसे विनती की उसने । मैं तेरे इन्सानों के खोटे सिक्के अपनी थैली में डालता रहा, तू खोटे इन्सान अपनी थैली में डाल लेना ।

कहते हैं उस दिन लंबी समाधि में यह लीन हुआ। बहुत प्रबल समाधि में यह लीन हुआ। दयालु मनुष्य जब खोटे सिक्के को नहीं ठुकरा सकता तो खोटे मनुष्य को क्या ठुकराएगा ? उसको चोर पर भी दया आएगी, ठग पर भी दया आएगी। गुरु नानक को आ गई चाहे सज्जन ठग ही है, दया आ गई। ऋषि मुनि निवेदन करेंगे, गुरु नानक घर आए। पर ठग ने बुलाया भी नहीं और गुरु ठग के घर चले गए हैं। हैरानी की बात। भक्त बैठे विनती करते रह जाएँगे। राक्षस ने बुलाया भी नहीं और गुरु नानक चले जाएँगे। खोटे सिक्के पर भी तरस आ जाता है। इतना हृदय कोमल। बुरे से भी नेकी से पेश आना, भलाई से पेश आना, दया का पात्र।

दया पर ही धर्म खड़ा है। दया कहते हैं माँ है। दयालु मनुष्य के अंदर ही नाम की किरण फूटती है। अगर मनुष्य प्रभु की दया का पात्र बन जाए तो उसके दुखों की निवृत्ति हो सकती है, अगर यह बंदगी करने लग जाए। अगर वह जप करने लग जाए। उस जप से वह प्रबल अज्ञान मिट जाएगा, जिससे दुख था। जिसको करोड़पति बनने में सुख दिखाई दे रहा है, उसके सामने परमात्मा कुछ भी नहीं है। यह तो लोभ करके दिखाई दे रहा है। बाहर का विकास दिखाई दे रहा है। अंदर का आनंद दिखाई नहीं दे रहा। आंतरिक विकास नहीं दिखाई दे रहा।

सलोक ।। दइआ करणं दुख हरणं उचरणं नाम कीरतनह ।।

रसना नाम का उच्चारण करे और मनुष्य दया का पात्र बन जाता है। उस पर प्रभु की दया हो जाती है और जिस पर प्रभु की दया हो जाती है, उसकी दया सब दुखों को मिटा देती है। दुखों को हर लेती है। उस पर कोई दुख नहीं रह जाता।

दइआल पुरख भगवानह नानक लिपत न माइआ ।। १ ।।

वह जो पुरुषोत्तम है, वह जो व्यापक है, वह जो सभी का भाग्य बनाने वाला भगवान है, जब उसकी दया का कोई पात्र बन जाता है तो संसार की दुख रूप माया उसको प्रभावित नहीं करती। वह संसार में रहता हुआ दुखी नहीं होता। वह शरीर में रहता हुआ व्याकुल नहीं होता।

भाहि बलंदड़ी बुझि गई रखंदड़ो प्रभु आपि ।।

ऐसी उसकी दया हुई, ऐसी उसकी बख्शिश हुई, वह जो तृष्णा की आग जल रही है लोभ करके। बाहर का सारा विकास लोभ पर खड़ा है। आंतरिक सारा विकास संतोष पर खड़ा है। लोभी कठोर ही होगा, क्योंकि किसी को धोखा देना है, छल भी करना है, बेईमानी भी करनी है, बिना कठोरता के नहीं हो सकती। संतुष्ट मनुष्य दयालु होता है। दयालु मनुष्य संतुष्ट होता है। संतुष्ट मनुष्य ठोकर नहीं मार सकता। मुश्किल है किसी को आर्थिक तल पर धोखा देना। नहीं देगा। इस तरह तृष्णा की यह जो अग्नि है, यह जो व्याकुलता है तृष्णा करके, यह उसको प्रभावित नहीं करती। तृष्णा उसको नहीं जलाती।

जिनि उपाई मेदनी नानक सो प्रभु जापि ।। २ ।।

सतिगुरु जी कहते हैं कि जिसने सारा संसार पैदा किया है। मेदनी नाम प्रचलित हुआ है पुराने प्रसंग के मुताबिक। गुरु गोबिंद सिंघ महाराज के दशम ग्रंथ में यह सारा प्रसंग लिखा है। जिसने मेदनी बनाई है, जिसने सारा संसार बनाया है, उसका जप सभी दुखों को नाश कर देता है और मनुष्य आनन्दमय होकर जीता है।

पउड़ी ।। जा प्रभ भए दइआल न बिआपै माइआ ।।

श्लोक में मूल बात कह दी है। पउड़ी में उसका खुलासा है। जब परमात्मा की कृपा हुई। दया का मनुष्य पात्र हुआ तो फिर तृष्णा की आग उसको प्रभावित नहीं करती। उसको जलाती नहीं।

कोटि अघा गए नास हरि इकु धिआइआ ।।

लोभ करके, तृष्णा करके जो करोड़ों पाप किए थे।

कबीरा जहा गिआनु तह धरमु है जहा झूठु तहा पापु ।।
जहा लोभु तह कालु है जहा खिमा तह आपि ।।

(अंग १३७२)

पाप होंगे। चलता रहेगा। और यह बड़ा प्रधान अवगुण है लोभ। लोभी भाई से धोखा कर सकता है। लोभी देश से धोखा कर सकता है। लोभी मजहब से धोखा कर सकता है। लोभी गुरु से धोखा कर सकता है।

कहते हैं पटना साहिब की बात है। सतिगुरु ने चार सज्जनों को कहा सोने की पालकी बना कर लानी है और यह सोना लो। सोना दिया।

ऐतिहासिक कथा है गुरु प्रताप सूरज की । वह तीन महीनों बाद पालकी बना कर लाए और सतिगुरु ने कहा फिर लकड़ी की एक चिता सजाओ । साथ गोबर भी रखो । किया गया । फिर कहा अब पालकी को रखो और आग लगाओ । माता जी ने आकर रोका, महाराज यह क्या ? लाल जी, यह क्या हो रहा है ? यह बेचारे बना कर लाए हैं । तुमने सिर्फ 100 तोले सोना दिया था, यह तो कहते हैं कि हमने 700 तोले की बनाई है । यह तो कहते हैं हमने और सोना इकट्ठा किया है । अपनी ओर से दिया है । संगतों से इकट्ठा दिया है । महाराज माता जी को कहने लगे, तो ही अग्नि भेट करनी है । माता जी मना करते हैं, ऐसे न करो । इनकी मेहनत, इतनी सुन्दर पालकी बना कर लाए हैं, 700 तोले की है । माँ जी, यह आग ही बताएगी कि 700 तोले की है कि सिर्फ 7 तोले की है । आग्नि भेट कर दी है । 7 तोले सोना सतिगुरु ने 100 दिया जो, उसमें से रख गए । यह झूठ बोलते गए कि हमने स्वयं में से लगाया है । कलगीधर पिता माँ को कहते हैं अगर लोभ है तो मनुष्य परमात्मा को धोखा देने की कोशिश करता है, हम क्या हैं । यह लोभी हैं । यह प्रबल लोभी हैं । लोभी मनुष्य गुरु को धोखा दे सकता है, प्रभु को धोखा देने की कोशिश करेगा । संसार को धोखा देने की कोशिश करेगा । मजहब को धोखे में रखा । देश को धोखे में रखा । इसलिए साहिब कहते हैं ।

लोभी का वेसाहु न कीजै जे का पारि वसाइ ॥

(अंग १४१७)

लोभी तो पागल कुत्ते की तरह होता है :

जिउ कूकरु हरकाइआ धावै दह दिस जाइ ॥
लोभी जंतु न जाणई भखु अभखु सभ खाइ ॥ *(अंग ५०)*

वह तो हर चीज पर हाथ मारेगा । साहिब कहते हैं जैसे परिपूर्ण परमात्मा की दया के पात्र बने । उसकी रहमत हुई । तृष्णा की आग सारी की सारी बुझ गई । लोभ सारे का सारा शान्त हो गया । माया का अब प्रभाव नहीं पड़ता ।

निरमल भए सरीर जन धूरी नाइआ ॥

सत्संगियों की चरण-धूल को मस्तक पर लगा कर, शरीर पर लगा कर तन भी निर्मल हो गया। प्रभु का नाम जप-जप कर निर्मल हुआ है। सत्संग की धूल तन पर लगा कर तन निर्मल हो गया है। इस तरह तन और मन दोनों पवित्र हो गए।

मन तन भए संतोख पूरन प्रभु पाइआ ॥

अंदर संतुष्टि पैदा हो गई। अब बाहर से जो कुछ है उसमें भी हम संतुष्ट हैं। थोड़ा है, सुख है, दुख है, हम संतुष्ट हैं। कबूल है। इस तरीके की मानसिक अवस्था बन गई है। परिपूर्ण परमात्मा की प्राप्ति होती है।

तरे कुटंब संगि लोग कुल सबाइआ ॥ १८ ॥

कुटंब होता है संगी लोक। जो साथ वाले साथी होते हैं। यह साथी उसको कहते हैं जो साथ निभाए। साथी उसको कहते हैं जो हम-ख्याल बने। साथी उसको कहते हैं जो हम-विचार बने, हम-ख्याल बने। तो जितने भी हम-ख्याल बन जाएँ, उनका भी पार-उतारा हो जाता है। साहिब कहते हैं कि सारे कुटंब का वह आधार बन जाता है। कौन से कुटंब का ? सभी साथियों का आधार बन जाता है। कौन से साथियों का ? जो उसके हम-ख्याल हैं। चाहे कितने भी हों, हज़ारों हों, सैकड़ों हों। चाहे कितना बड़ा उसका कुटंब हो। वह साथी का आसरा बन जाता है और वह सभी भवसागर से पार हो जाते हैं। सभी के दुखों से छुटकारा हो जाता है। भूल चूक की माफी।

वाहिगुरु जी का खालसा ॥ वाहिगुरु जी की फतह ॥